जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला

(चौथा भाग)

प्रस्तावना

सन् १९६९ श्रावण मास में प्रथमबार, प० कैलाश चन्द्र जी बुलन्दशहर वालों की शुभ प्रेरणा से हम को अध्यात्म सत् पुरुष श्री कानजी स्वामी के दर्शन हुए ।

जगत के जीव दु:ख से छूटने के लिए और सुख प्राप्त करने के लिए सतत् प्रयत्नशील हैं। परन्तु मिथ्यात्व के कारण जगत के जीवो के समस्त उपाय मिथ्या हैं। सुखी होने का उपाय एकमात्र अपने शुद्ध स्वरुप की पहिचान उसका नाम सम्यग्दर्शन है । ऐसे सम्यग्दर्शन का उपदेश ही श्री कानजी स्वामी के प्रवचनों का सार है। हमें लगता है भव्य जीवो के लिए इस युग मे श्री कानजी स्वामी के उपकार करोडो जबानो से कहे नही जा सकते हैं।

सोनगढ़ में श्रीखेम चन्द भाई तथा श्री रामजी भाई से जो कुछ हमने सीखा पढा है उसके अनुसार श्री कैलाश चन्द्र जी द्वारा गुम्फित प्रश्नोत्तरों का हमने बारम्बार अवलोकन किया तो हमे ऐसा लगा कि हमारे जैसे तुच्छ बुद्धि जीवो की बहुलता है। अपना हित करने में निमित्त रुप से प्रश्नोत्तर के रुप मे जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला चौथा भाग बहुत ही उपयोगी ग्रन्थ होगा। हमने पंडित कैलाश चन्द्र जी से इस ग्रंथ को छपा देने की इच्छा व्यक्त की। उनकी अनुमति पाकर, मुमुक्षुओ को सन्मार्ग पर चलकर अपना आत्महित करने को बल मिले ऐसी भावना से यह पुस्तक आपके हाथ में है।

इस पुस्तक में कार्य की स्वतंत्रता बताने के लिए अनेकान्त-स्याद्वाद, मोक्षमार्ग, पांच असाधारण भावों का विशेष स्पष्टीकरण

किया है इसके अभ्यास से अवश्य ही, परमें कर्ता-भोक्ता की खोटी बुद्धि का अभाव होकर जीवों को धर्म की प्राप्ति का अवकाश है। ऐसी भावना से ओतप्रोत होकर हम आत्मार्थियों से निवेदन करते है कि इस पुस्तक का अभ्यास कर अपने हितमार्ग पर आरुढ़ होंवे।

विनीत :

मुमुक्षुमंडल

श्री दिगम्बर जैन मंदिर

सरनीमल हाऊस, देहरादून।

—★—

मुख्य विषय

प्रकरण	पृष्ठ
मंगलाचरण	१
अनेकान्त और स्याद्वाद अधिकार	१
मोक्षमार्ग अधिकार	३३
जीव के पांच असाधारण भाव	७३
मोक्ष मार्ग सम्बन्धी प्रश्नोत्तर	११०

हम तो कबहूं न निज घर आये

हम तो कबहूँ न निज घर आये।। टेक ।।
पर घर फिरत बहुत दिन बीते, नाम अनेक धराये ।। हम० ।।
परपद निजपद मान मगन ह्वै, परपरिणति लिपटाये ।।
शुद्ध बुद्ध सुखकन्द मनोहर, चेतनभाव न भाये ।। हम० ।।
नर पशु देव नरक निज जान्यो, परजय बुद्धि लहाये ।।
अमल अखण्ड अतुल अविनाशी, आतमगुन नहिं गाये ।। हम० ।।
यह बहु भूल भई हमरी, फिर कहा काज पछिताये ।।
'दौल' तजो अजहूं विषयनको, सत्गुरुवचन सुहाये ।। हम० ।।

कृपया शुद्धि ठीक करके पढ़े ।

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	८	चहे	चूहे
४	२	दृष्टन्त	दृष्टान्त
५	२५	चारित्र	चारित्र
६	५	कसा	कैसा
१०	१८	को	की
११	१२	पर्यायों	गुण, पर्यायों
११	१७	प्राप्ति	प्राप्ति का
१२	२	क	के
१२	१३	होवे	हौने
१२	२२	निर्विकल्पना	निर्विकल्पता
१४	१०	ग्रस्त	ग्रस्ति
१६	३	महावार	महावीर
१७	१२	का	×
१८	५	परिणमी	परिणामी
२०	२१	साधन	×
२२	१८	अरिरिक्त	अतिरिक्त
२५	२३	एक	×
२८	२२	का	काल
३१	१०	चर	चार
४२	२१	शुभाशुभो	शुभाशुभ
४४	१३	दूसवर्ती	दूरवर्ती
४५	१२	गा० ८१६	गा० १८१६
४७	२२	निजरा	निर्जरा
४७	२३	शक्त	शक्ति
४८	२१	लल	लाल

卐 श्री वीतरागाय नम. 卐

जैन सिध्दान्त प्रवेश रत्नमाला

चौथा भाग

卐 मगलाचरण 卐

णमो अरहताण, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाण।
णमो उवज्भायाण, णमो लोए सव्व साहूण ॥

उभयनयविरोधध्वसिनि स्यात्पदाङ्के
जिनवचसि रमन्ते ये स्वय वान्तमोहा।
सपदि समयसार ते पर ज्योतिरुच्चै—
रनवमनयपक्षाक्षुण्यमीक्षन्त एव ॥कलश ४॥

स्यादवाद अधिकार अब, कहौ जैन को मूल।
जाके जानत जगत जन, लहै जगत–जल–कूल ॥

अर्थ — जैन मत का मूल सिद्धान्त "अनेकान्त स्याद्वाद" है, जिसका ज्ञान होने से जगत के मनुष्य ससार-सागर से पार होते है।

अनेकान्त और स्याद्वाद अधिकार

प्रश्न १ अनेकान्त किसे कहते है ?

उत्तर—प्रत्येक वस्तु मे वस्तुपने की सिद्धि करने वाली अस्तित्व नास्तित्व, एक-अनेक, नित्य-अनित्य आदि परस्पर विरुद्ध दो शक्तियो का एक ही साथ प्रकाशित होना—उसे अनेकान्त कहते हैं।

प्रश्न २—अनेकान्त का व्युत्पत्ति अर्थ क्या है ?

उत्तर—अन् = नही। एक = एक। अन्त = धर्म।

(१) एक धर्म नही अर्थात् दो धर्म हो। (२) वह भी (दो धर्म) परस्पर विरुद्ध हो। (३) वस्तु को सिद्धकरता हो, वह अनेकान्त है।

प्रश्न ३—वस्तु किसे कहते है ?

उत्तर—(१) जिसमे गुण पर्याय बसते हो उसे वस्तु कहते हैं। (२) जिसमे सामान्य विशेषपना पाया जावे, उसे वस्तु कहते है। (३) जो अपना अपना प्रयोजनभूत कार्य करता हो, उसे वस्तु कहते हैं।

प्रश्न ४—यह तीनो बाते किस वस्तु मे पाई जाती हैं ?

उत्तर—प्रत्येक द्रव्य मे यह तीनो बातें पाई जाती है इसलिए जाति अपेक्षा छह द्रव्य और सख्या अपेक्षा अनन्तानन्त सब द्रव्य वस्तु है।

प्रश्न ५—'वस्तु' जानने से हमे क्या लाभ रहा ?

उत्तर—जब प्रत्येक द्रव्य वस्तु है तो मै भी एक वस्तु हूँ। मैं अपने गुण पर्यायो मे बसता हूँ पर मैं नही बसता हू ऐसा जानकर अपनी वस्तु की ओर द्रष्टि करे तो सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होकर क्रम से निर्वाण की प्राप्ति हो यह वस्तु को जानने का लाभ है।

प्रश्न ६—मैं अपने गुण पर्यायो मे बसता हू, पर मैं नही बसता हू इसमे "पर" अर्थात् क्या है ?

उत्तर—(१) अत्यन्त भिन्न जितने पर पदार्थ हैं, उनमे नही बसता हू। (२) औदारिक, तैजस कार्माण, भाषा और मन मे नही बसता हू। (३) शुभाशुभ भावो और भेदाभेद के पक्षो मे नही बसता हूं

बाकी जो बचा वह "मैं" उसमे दृष्टि करते ही धर्म की शुरुआत होकर क्रम से वृद्धि और पूर्णता होती है।

प्रश्न ७—प्रत्येक वस्तु अपने २ मे ही बसती है पर मे नही, ऐसा शास्त्रो मे कहा आया है ?

उत्तर (१) मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ ५२ व ३०६। (२) समयसार गा० ३ की टीका मे, गा० १०३, गा० ३७२ मे।

प्रश्न ८—विरोध कितने प्रकार का है ?

उत्तर—दो प्रकार का है। (१) एक विरोध—बिल्ली चूहे की तरह वस्तु को नाश करने वाला है। (२) दूसरा विरोध, 'अस्ति-नास्ति' आदि वस्तु को सिद्ध करनेवाला है।

प्रश्न ९—'अस्ति नास्ति' विरोध, वस्तु को सिद्ध करनेवाला कैसे ?

उत्तर १—जैसे किसी ने पूछा, क्या आत्मा है ? हा है।
२—जैसे किसी ने पूछा, क्या आत्मा नही है ? हाँ है।
दोनो प्रश्नो का उत्तर 'हाँ है"। विरोध लगता है। परन्तु 'स्यात्' पद लगाने से विरोध मिट जाता है।

प्रश्न १०—स्यात् पद लगाने से विरोध कैसे मिटा ?

उत्तर—आत्मा अपने रूप से है और पर रूप से नही है तो विरोध मिट गया।

प्रश्न ११—विरोध होते हुए भी, विरोध वस्तु को सिद्ध करता है दूसरा दृष्टान्त देकर समझाइये ?

उत्तर—(१) क्या आत्मा नित्य है ? हाँ है।
(२) क्या आत्मा अनित्य है ? हा है।
दोनो प्रश्नो के उत्तर मे 'हाँ' है। विरोध लगता है परन्तु आत्मा द्रव्य गुण की अपेक्षा नित्य है और आत्मा पर्याय की अपेक्षा अनित्य है। देखो विरोध मिट गया।

प्रश्न १२—विरोध होते हुए भी विरोध वस्तु को सिद्ध करता है तीसरा दृष्टान्त दो ?

उत्तर —(१) अपनी मूर्खता चक्कर खिलाती है ? हा।

(२) कर्म चक्कर खिलाता है ? हा।

दोनो प्रश्नो के उत्तर मे 'हा' है। विरोध लगता है परन्तु आत्मा अपनी मूर्खता से चक्कर काटता है यह निश्चयनय का कथन है और कर्म चक्कर खिलाता है यह व्यवहारनय का कथन है। ऐसा जाने तो विरोध मिट जाता है।

प्रश्न १३—नीचे लिखे वाक्यो मे विरोध लगता है इनका विरोध कैसे मिटे, स्पष्ट करो ?

(१) अपनी आत्मा का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है और देव गुरु शास्त्र का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है। (२) देश चारित्र रूप शुद्धि श्रावकपना है और १२ अणुव्रतादि भी श्रावकपना है। (३) सकल चारित्र मुनि पना है। और २८ मूल गुण पालन भी मुनिपना हैं। (४) सम्यग्दर्शन आत्मा के आश्रय मे होता है और दर्शन मोहनीय के अभाव से भी होता है ? इन सब मे विरोध लगता है. यह विरोध कसे मिटे ?

उत्तर—(१) अपनी आत्मा का श्रद्धान निश्चय सम्यग्दर्शन है और देव गुरु शास्त्र का श्रद्धान व्यवहार सम्यग्दर्शन है अर्थात् व्यवहार सम्यग्दर्शन सच्चा सम्यग्दर्शन नही है निमित्त का अपेक्षा कथन किया है ऐसा जानने से विरोध मिट जाता है।

(२) देश चारित्र रूप शुद्धि निश्चय श्रावकपना है और १२ अणुव्रतादि व्यवहार श्रावक पना है अर्थात् व्यवहार श्रावकपना सच्चा श्रावकपना नही है निमित्त की अपेक्षा कथन किया है ऐसा जाने तो विरोध मिट जाता है।

(३) सकल चारित्र रूप शुद्धि सच्चा मुनिपना हैं और २८ मूलगुण पालन व्यवहार मुनिपना है अर्थात् व्यवहार मुनिपना सच्चा मुनिपना नही है निमित्त की अपेक्षा कथन किया हैं ऐसा जाने तो विरोध मिट जायेगा।

(४) सम्यग्दर्शन आत्मा के आश्रय मे होता है यह यथार्थ बात है और दर्शन मोहनीय के अभाव से हाता है यह उपचार कथन है अर्थात् उपचार कथन असत्यार्थ है ऐसा जाने तो विरोध मिट जावेगा।

प्रश्न १४—व्यवहार उपचार कब कहा जा सकता ह ?

उत्तर—(१) जिसको निश्चय प्रगटा हो उसी को उपचार लागू होता है, क्योकि अनुपचार हुए बिना उपचार लागू नही होता है।

(२) व्यवहार या उपचार यह झूठा कथन है, क्योकि व्यवहार किसी को किसी मे मिलाकर निरुपण करता है इसके श्रद्धान से मिथ्यात्व है, इसलिए इसका त्याग करना और जहा २ व्यवहार या उपचार कथन हो वहा "ऐसा नही हैं निमित्तादि को अपेक्षा उपचार किया हैं" ऐसा जानने को व्यवहार उपचार कहा जा सकता है।

प्रश्न १५ –अपनी आत्मा का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है और देव, गुरु, शास्त्र का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है इसमे सच्चा और मिथ्या अनेकान्त किस प्रकार है ?

उत्तर—अपनी आत्मा का श्रद्धान ही सम्यग्दर्शन है देव, गुरु, शास्त्र का श्रद्धान सम्यग्दर्शन नही है यह सच्चा अनेकान्त है और अपनी आत्मा का श्रद्धान भी सम्यग्दर्शन है देव गुरु शास्त्र का श्रध्दान भी सम्यग्दर्शन है यह मिथ्या अनेकान्त है।

प्रश्न १६—(१) देश चारित्र रूप शुद्धि भी श्रावकपना है और १२

अणुव्रतादि भी श्रावकपना है। (२) सकल-चारित्र रूप शुद्धि भी मुनिपना है और २८ मूलगुण पालन भी मुनिपना है। (३) सम्यग्दर्शन आत्मा के आश्रय से भी होता है और दर्शन मोहनीय के अभाव से भी होता है।

इनमे सच्चा अनेकान्त और मिथ्या अनेकान्त क्या है?

उत्तर—देश चारित्र रूप शुद्धि ही श्रावकपना है १२ अणुव्रतादि श्रावकपना नही है यह सच्चा अनेकान्त है। देश चारित्र रूप शुद्धि भी श्रावकपना है और १२ अणुव्रतादिभी श्रावकपना है यह मिथ्या अनेकान्त है।

इसी प्रकार बाकी दो वाक्यो मे सच्चा और मिथ्या अनेकान्त लगा कर बनाओ?

प्रश्न १७—प्रत्येक द्रव्य मे (१) सत् असत् (२) नित्य अनित्य (३) एक अनेक आदि अनेक धर्म है वह किस प्रकार है?

उत्तर—जैसे एक आदमी को कोई पिताजी, कोई बेटा जी, कोई मामा जी, कोई चाचा जी, कोई ताऊ जी कहता है। तो क्या वह झगडा करेगा? नही करेगा क्योंकि वह समझता है इस अपेक्षा मामा हू इस अपेक्षा पिताजी हू, उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य मे नित्य-अनित्य, एक अनेक आदि अनेक धर्म है उनमे अपेक्षा समझने से कभी झगडा नही होता परन्तु अनेकान्त स्याद्वाद धर्म की सिद्धि होती है।

प्रश्न १८—अनेकान्त को कब समझा और कब नही समझा, इसके कुछ दृष्टान्त देकर समझाईये?

उत्तर—(१) आत्मा अपने रूप से है पर रूप से नही है तो अनेकान्त का समझा है। आत्मा अपने रूप से भी है और पर रूप से भी है

तो अनेकान्त को नहीं समझा ।

(२) आत्मा अपना कर सकता है पर का नही कर सकता तो अनेकान्त को समझा है । आत्मा अपना भी कर सकता है और पर का भी कर सकता है तो अनेकान्त को नही समझा ।

(३) आत्मा के आश्रय से शुद्ध भाव से धर्म होता है शुभभाव से नही तो अनेकान्त को समझा है । आत्मा के आश्रय से शुध्द भाव से भी धम होता है और शुभभाव से भी धर्म होता है तो अनेकान्त को नही समझा ।

(४) ज्ञान का कार्य ज्ञान से होता है और दूसरे गुणो से नही, तो अनेकान्त को समझा है । ज्ञान का कार्य ज्ञान गुण से भी होता है और गुणो से भी होता है तो अनकान्त को नही समझा ।

(५ एक पर्याय अपना कार्य करती हैं दूसरी पर्याय का कार्य नही करती तो अनेकान्त को समझा है । एक पर्याय अपनाभी कार्य करती है और पर का भी कार्य करती है तो अनेकान्त को नही समझा ।

(६) ज्ञान आत्मा से होता है शरीर, इन्द्रिया, कर्म और शुभाशुभ भावो से नही होता तो अनकान्त को समझा है । ज्ञान आत्मा से भी होता है और शरीर, इन्द्रिया, कम, और शुभाशुभ भावो से भी होता है तो अनेकान्त को नही समझा ।

प्रश्न १९—(१) शास्त्र से ज्ञान होता है । (२) दर्शन मोहनीय के उपशम से औपशमिक सम्यक्त्व होता है । (३) शुभ भाव से धर्म होता है । (४) कुम्हार ने घडा बनाया । (५) धर्म द्रव्य ने मुझे चलाया । (६) कर्म मुझे चक्कर कटाते हैं ।

(७) शरीर ठीक रहे तो आत्मा को सुख मिलता है। (८) सम्यग्दर्शन के कारण ज्ञान चारित्र में शुद्धि होती है। (९) केवलज्ञानावर्णी के अभाव से केवलज्ञान होता है। (१०) केवल ज्ञान होने से केवल ज्ञानावर्णी का अभाव होता है। इन सब वाक्यो मे अनेकान्त को कब माना और कब नही माना, स्पष्ट खुलासा करो ?

उत्तर (१) ज्ञान गुण से ज्ञान होता है शास्त्र से नही तो अनेकान्त को माना। ज्ञान गुण से भी ज्ञान होता है और शास्त्र से भी होता है तो अनेकान्त को नही माना।

इसी प्रकार बाकी ९ प्रश्नो के उत्तर दो।

प्रश्न २०—सच्चे अनेकान्त के जानने वाले को कैसे कैसे प्रश्न उपस्थित नही होते हैं ?

उत्तर—(१) मैं किसी का भला या बुरा कर दू। (२) मेरा कोई भला या बुरा कर दे, (३) शरीर की क्रिया से धर्म होगा, (४) शुभभाव से धर्म होगा या शुभभाव करते २ धर्म होगा, (५) निमित्त से उपादान मे कार्य होता है, (६) एक गुण का कार्य दूसरे गुण से होता है, (७) एक पर्याय दूसरी पर्याय मे कुछ करे आदि प्रश्न सच्चे अनेकान्ती को नही उठते हैं, क्योकि वह जानता है कि एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य से किसी भी प्रकार का सबध नही है। एक गुण का दूसरे गुण से तथा एक पर्याय का दूसरी पर्याय से कुछ सम्बन्ध नही है इसलिए सच्चे अनेकान्ती को ऐसे प्रश्न नही उठते हैं।

प्रश्न २१—मिथ्या दृष्टि को कैसे २ प्रश्न उठते हैं ?

उत्तर—(१) मैं दूसरो का भला बुरा या दूसरे मेरा भला बुरा कर

सकते हैं। (२) शरीर मेरा है। (३) शरीर का कार्य मैं कर सकता हू। (४) निमित्त से उपादान मे कार्य होता है। (५) शुभभाव से धर्म होता है, आदि खोटे प्रश्न उपस्थित होते है, क्योंकि वह स्याद्वाद अनेकान्त का रहस्य नही जानता है।

प्रश्न २२—स्याद्वाद अनेकान्त कैसा है ?

उत्तर अनन्त धर्मोवाला द्रव्य है। उसके एक एक धर्म का आश्रय करके विवक्षित (मुख्य अविवक्षित (गौण) की विधि-निषेध द्वारा प्रगट होने वाली सप्त भगो सतत् सम्यक् प्रकार से कथन किये जाने वाले 'स्यात्'' कार रूपी अमाघ मत्र द्वारा "ही" मे भरे हुए, सर्व विविध विषय के मोह को दूर करता है।

प्रश्न २३—स्व से अस्ति और पर स नास्ति क्या बताता है ?

उत्तर—मैं अपने स्वभाव से हू पर से नही हू। ऐसा बताता है।

प्रश्न २४—मै अपने स्वभाव से हू पर से नही हू "पर मे" क्या २ आया ?

उत्तर (१) अत्यन्त भिन्न पर पदार्थ, (२) औदारिक, तैजस, कार्माण शरीर, भाषा और मन।(३) शुभाशुभ भाव। (४) पूर्ण अपूर्ण शब्द पर्याय का पक्ष (५) भेदकर्म का पक्ष (६) अभेद कम का पक्ष (७) भेदाभेद कर्म का पक्ष।

प्रश्न २५- मै अपने स्वभाव से हू पर से नही हू इसको जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर -मैं अपने स्वभाव से हू पर से नही, ऐसा निर्णय करते ही अनादिकाल से जो पर मे कर्ता-भोक्ता की बुद्धि थी, उसका अभाव होकर सम्यकदर्शनादि की प्राप्ति हो जाती है।

प्रश्न २६—अनन्त चतुष्टय की प्राप्त किसको है और अनन्त चतुष्टय क्या है ?

उत्तर—अनन्तचतुष्टय की प्राप्ति अरहत भगवान को हुई है और अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख और अनन्तवीर्य, यह चार अनन्तचतुष्टय कहलाते हैं।

प्रश्न २७—भगवान को अनन्त चतुष्टय की प्राप्ति कैसे हुई ?

उत्तर—भगवान ने अपने स्व चतुष्टय की ओर दृष्टि दी, तो उनको अनन्तचतुष्टय की प्राप्ति हुई।

प्रश्न २८—भगवान ने कैसे स्व चतुष्टय की ओर दृष्टि दी तो उनको अनन्त चतुष्टय की प्राप्ति हुई ?

उत्तर—(१) स्वद्रव्य, निर्विकल्प मात्र वस्तु, परद्रव्य, सविकल्प भेद कल्पना। (२) स्वक्षेत्र, आधारमात्र वस्तु का प्रदेश, परक्षेत्र, सविकल्प परक्षेत्र, सविकल्पभेद, परप्रदेश। (३) स्वकाल वस्तु मात्र का मूल अवस्था, परकाल, एक समय पर्याय की कल्पना। (४ स्वभाव, वस्तु की मूल सहज शक्ति, परभाव, अनेक गुणो द्वारा भेद कल्पना।

इस प्रकार स्व द्रव्य क्षेत्र काल भाव को ओर दृष्टि करने से पर द्रव्य क्षेत्र काल भाव की ओर दृष्टि ना करने से भगवान को अनन्त चतुष्टय की प्राप्ति हुई।

प्रश्न २९—हमे अनन्त चतुष्टय को प्राप्ति कैसे होवे ?

उत्तर—जैसे भगवान ने किया और वैसा ही उपदेश दिया है, जो जीव भगवान के कहे अनुसार चलता है उसे अनन्त चतुष्टय की प्राप्त होती है, अन्य प्रकार से नहीं।

प्रश्न ३० स्वचतुष्टय, परचतुष्टय कितने द्रव्यो मे पाया जाता है ?

उत्तर—प्रत्येक द्रव्य मे पाया जाता है।

प्रश्न ३१—जो मूढ मिथ्यादृष्टि है वह कैसे करे तो अनन्त चतुष्टय की प्राप्ति हो ?

उत्तर–(१) मेरा द्रव्य गुण पर्याय मेरा स्वद्रव्य है, इसकी अपेक्षा बाकी सब द्रव्यो के गुण पर्यायो के पिण्ड पर द्रव्य है। २) मेरा असख्यात प्रदेशी आत्मा स्वक्षेत्र है, इसकी अपेक्षा बाकी सब द्रव्यो का क्षेत्र परक्षेत्र है। (३) मेरी पर्यायो का पिण्ड स्वकाल है, इसकी अपेक्षा बाकी सब द्रव्यो की पर्यायो का पिण्ड परकाल है। (४) मेरे अनन्त गुण मेरा स्वभाव है, इसकी अपेक्षा बाकी सब द्रव्यो के अनन्त २ गुण परभाव हैं। पात्र जीव को प्रथम प्रकार का भेद विज्ञान करने से अनन्त चतुष्टय की प्राप्त का अवकाश है।

प्रश्न ३२—दूसरे प्रकार का भेद विज्ञान क्या है?

उत्तर (१) मेरे गुणो पर्यायो का पिण्ड स्वद्रव्य है, इसकी अपेक्षा पर्यायो का भेद परद्रव्य है (२) असख्यात प्रदेशी क्षेत्र मेरा स्वक्षेत्र है, इसकी अपेक्षा प्रदेश भेद परक्षेत्र है। (३) कारण शुद्धपर्याय मेरा स्वकाल है इसकी अपेक्षा पर्याय का भेद परकाल है। (४) अभेद गुणो का पिण्ड स्वभाव है, इसकी अपेक्षा ज्ञान दर्शन का भेद परभाव है। पात्र जीव को दूसर प्रकार का भेद विज्ञान करने से अनन्त चतुष्टय की प्राप्ति अवकाश है।

प्रश्न ३३—तीसरे प्रकार का भेद विज्ञान क्या है?

उत्तर (१) अनन्त गुण पर्यायो का पिण्डरूप अभेद द्रव्य मे हू ऐसा विकल्प परद्रव्य है, इसकी अपेक्षा 'है सो है' वह स्वद्रव्य है। (३) असख्यात प्रदेशी अभेद क्षेत्र का विकल्प परक्षेत्र है, इसकी अपेक्षा 'जो क्षेत्र है सो है' जिसमे विकल्प का भी प्रवेश नही, वह स्वक्षेत्र है। (३) कारण शुध्द पर्याय 'अभेद मैं' यह विकल्प परकाल है, इस की अपेक्षा 'जो है सो है' जिसमे विकल्प भी नही है वह स्वकाल है। (४)अभेद गुणो के पिण्ड का विकल्प परभाव

है, इसकी अपेक्षा जिसमे गुणो का विकल्प भी नही हैं वह स्वभाव है। पात्र जीवो को तीसरे प्रकार क भेद विज्ञान से अनन्तचतुष्टय की प्राप्ति नियम से होती है।

प्रश्न ३४—जैसा आपने तीन प्रकार का भेद विज्ञान बताया है ऐसा तो हमने हजारोबार किया है, परन्तु हमे अनन्त चतुष्टय की प्राप्ति क्यो नही हुई ?

उत्तर—वास्तव मे इस जीव ने एक बार भी भेदविज्ञान नही किया है क्योकि अनुभव होने पर भूतनैगमनय से तीन प्रकार का भेद विज्ञान किया, तब उपचार नाम पाता है, क्योकि अनुपचार हुए बिना उपचार नाम नही पाता है।

प्रश्न ३५—अस्ति नास्ति अनेकान्त को वास्तव मे कब समझा कहा जा सकता है ?

उत्तर—अपने आत्मा का अनुभव होवे पर अस्ति-नास्ति का अनेकान्त समझा कहा जा सकता है।

प्रश्न ३६—क्या ११ अग ९ पूर्व का पाठी द्रव्यलिगी मुनि भी अस्ति नास्ति का भेद विज्ञानी नही कहा जा सकता ?

उत्तर– बिल्कुल नही कहा जा सकता, क्योकि अपना अनुभव होने पर ही भेद विज्ञान नाम पाता है।

प्रश्न ३७ 'अस्ति' मे कौन आया ?

उत्तर—अपना परम पारिणामिक भाव ज्ञायक स्वभाव 'अस्ति मे' आया। वह भी अस्ति मे कब आया ? जब अपने अभेद के आश्रय से निर्विकल्पना हुई तब।

प्रश्न ३८—'नास्ति' मे कौन कौन आया ?

उत्तर—(१) अत्यन्त भिन्न पर पदार्थ। (२) आंख कान रूप औदारिक शरीर। (३) तैजस, कार्माण शरीर। (४) भाषा और मन

(५) शुभाशुभ भाव। (६) अपूर्ण पूर्ण शुद्ध पर्यायो का पक्ष। (७) भेद कर्म का पक्ष। (८) अभेद कर्म का पक्ष। (९) भेदाभेद कर्म का पक्ष।

प्रश्न ३९—'द्रव्य मे' अस्ति नास्ति क्या है ?

उत्तर—वस्तु स्वभाव से ही सामान्य विशेष रूप बनी हुई है। उसे सामान्य रूप मे देखना अस्ति है। भेदरूप, विशेष रूप देखना नास्ति रूप है। प्रदेश दोनो के एक ही हैं। जिस दृष्टि मे देखते हो उसे अस्ति कहते हैं और जिस दृष्टि से नही देखते वह नास्ति है।

प्रश्न ४०—'द्रव्य से' अस्ति-नास्ति जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर विशेष को गौण करके अपने सामान्य अस्ति की ओर दृष्टि करे तो तत्काल सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो, यह 'अस्ति-नास्ति' जानने से लाभ हुआ।

प्रश्न ४१—क्षेत्र से 'अस्ति-नास्ति' क्या है ?

उत्तर - वस्तु स्वभाव से देश देशाश रूप बनी हुई है। देश दृष्टि से देखना सामान्य दृष्टि है। इससे वस्तु मे भेद नही दिखता है। देशाशदृष्टि से देखना विशेषदृष्टि है। सामान्यदृष्टि क्षेत्र से अस्ति और विशेषदृष्टि क्षेत्र से नास्ति है।

प्रश्न ४२—'क्षेत्र से' अस्ति-नास्ति' जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर—क्षेत्र से नास्ति की दृष्टि गौण करके, सामान्य क्षेत्र के अस्ति पर दृष्टि करे तो तत्काल सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो, यह क्षेत्र से 'अस्ति-नास्ति' जानने का लाभ है।

प्रश्न ४३—'काल से' अस्ति-नास्ति क्या है ?

उत्तर—वस्तु स्वभाव से ही काल - कालाँश रूप बनी हुई है। काल से देखना सामान्यदृष्टि और कालाश दृष्टि से देखना विशेष-

दृष्टि है। सामान्यदृष्टि काल से अस्ति है। विशेषदृष्टि काल से नास्ति है।

प्रश्न ४४—'काल से' अस्ति-नास्ति जानने से क्या लाभ है?

उत्तर—विशेष दृष्टि कालाँश को गौण करके, सामान्यदृष्टि काल पर दृष्टि करे तो तत्काल सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो, यह काल से अस्ति-नास्ति जानने से लाभ हुआ।

प्रश्न ४५—'भाव से' अस्ति-नास्ति क्या है?

उत्तर—वस्तु स्वभाव से ही भाव–भावाश रूप बनी हुई है। भाव की दृष्टि से देखना सामान्यदृष्टि और भावाश की दृष्टि से देखना विशेषदृष्टि है। भाव मे सामान्य दृष्टि भाव से अस्ति है और भावाँश विशेष दृष्टि भाव से नास्ति है।

प्रश्न ४६—'भाव से' अस्ति-नास्ति जानने का क्या फल है?

उत्तर—भाव से नास्ति की दृष्टि को गौण करके सामान्य अस्ति की ओर दृष्टि करे तो तत्काल सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो, यह भाव से अस्ति-नास्ति जानने का फल है।

प्रश्न ४७—वस्तु अपने द्रव्य क्षेत्र काल भाव से है, पर द्रव्य क्षेत्र काल भाव से नही है इस बात का सार क्या है?

उत्तर—वस्तु सत् सामान्य की दृष्टि से द्रव्य क्षेत्र काल भाव से हर प्रकार अखड है। और वही वस्तु द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा अशो मे विभाजित हो जाती है इसलिए खडरूप है। वस्तु के दोनो रूप है। वस्तु सारी की सारी जिस रूप देखना हो उसे मुख्य और दूसरी को गौण कहते है। वस्तु के (आत्मा के क्योकि तात्पर्य हमे आत्मा से है) दोनो पहलू को जानकर सामान्य पहलू की ओर दृष्टि करने से जन्म मरण का अभाव हो जाता है। ऐसा जानकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हुई तो

अस्ति-नास्ति का ज्ञान सच्चा है, अन्यथा झूठा है।

प्रश्न ४८—अस्ति-नास्ति का ज्ञान किसको है और किसको नही ?

उत्तर—चोथे गुणस्थान से सब ज्ञानियों को है और निगोद से लगाकर द्रव्यलिगी मुनि तक को अस्ति-नास्ति का ज्ञान नही है।

प्रश्न ४९—नित्य अनित्य का रहस्य क्या है ?

उत्तर (१) वस्तु जैसे स्वभावत स्वत सिद्ध है। वैसे ही वह स्वभाव से परिणमन शील भी है।

(२) स्वत स्वभाव के कारण उसमे नित्यपना है। और परिणमन स्वभाव के कारण उसमे अनित्यपना है।

(३) नित्य अनित्यपना दोनो एक समय मे ही होते हैं।

(४) पात्र जीव अनित्य पर्याय को गौण करके नित्य स्वभाव की ओर दृष्टि करके जन्म मरण के दुख का अभाव करे। यह नित्य-अनित्य के जानने का रहस्य है।

प्रश्न ५०—नित्य किसे कहते हैं ?

उत्तर—पर्याय पर दृष्टि ना देकर, जब द्रव्य दृष्टि से केवल अविनाशी त्रिकाली स्वभाव देखा जाता हैं तो वस्तु नित्य प्रतीत होती है।

प्रश्न ५१—नित्य स्वभाव की सिद्धि कैसे होती है ?

उत्तर—'यह वही है' इस प्रत्यभिज्ञान से इसकी सिद्धि होती हैं। जैसे-जो मारीच था, वह ही शेर था, वह ही नदराजा था, और वह ही महावीर बना, "यह तो वही जीव था" इससे नित्य स्वभाव का पता चलता हैं।

प्रश्न ५२—अनित्य किस को कहते हे ?

उत्तर—त्रिकाली स्वत सिद्ध स्वभाव पर दृष्टि ना देकर, जब पर्याय से मात्र क्षणिक अवस्था देखी जाती है, तो वस्तु अनित्य प्रतीत होती है।

प्रश्न ५३—अनित्य की सिद्धि कैसे हो ?

उत्तर—"यह, वह नही है" इस ज्ञान से इसकी सिद्धि होती है, जैसे जो मारीच है, वह शेर नही, जो शेर है, वह महावीर नही है, इससे अनित्य की सिद्धि होती है।

प्रश्न ५४—आत्मा नित्य भी है और अनित्य भी है इसमे अनेकान्त किस प्रकार है ?

उत्तर--आत्मा द्रव्य गुण की अपेक्षा नित्य है और आत्मा पर्याय की अपेक्षा अनित्य है।

प्रश्न ५५—नित्य-अनित्य मे अनेकान्त कहा आया ?

उत्तर– आत्मा द्रव्य गुण की अपेक्षा नित्य ही है, अनित्य नही है यह अनेकान्त है और आत्मा पर्याय की अपेक्षा अनित्य ही है नित्य नही है यह अनेकान्त है।

प्रश्न ५६—कोई कहे आत्मा द्रव्य गुण की अपेक्षा नित्य भी है और अनित्य भी है ?

उत्तर—यह मिथ्याअनेकान्त है।

प्रश्न ५७ कोई कहे आत्मा पर्याय की अपेक्षा अनित्य भी है और नित्य भी है ?

उत्तर—यह मिथ्या अनेकान्त है।

प्रश्न ५८—व्रतादि मोक्ष मार्ग है इसमे सच्चा और मिथ्या अनेकान्त कैसे है ?

उत्तर—शुद्ध भाव मोक्षमार्ग हैं, व्रतादि मोक्ष मार्ग नही है यह सच्चा अनेकान्त है। शुद्ध भाव भी मोक्ष मार्ग है और शुभभाव भी मोक्षमार्ग है यह मिथ्या अनेकान्त है।

प्रश्न ५९—नित्य-अनित्यपना किसमे होता है ?

उत्तर—प्रत्येक द्रव्य मे, अनादि अनन्त नित्य अनित्यपना होता है।

प्रश्न ६०—नित्य-अनित्य अनेकान्त को समझने से क्या लाभ है ?

उत्तर—मेरा आत्मा नित्य है बाकी सब पर अनित्य है ऐसा जानकर अपने नित्य त्रिकाली भगवान का आश्रय लेकर धर्म की प्राप्ति होना, यह नित्य-अनित्य को समझने का लाभ है। अनित्य को गौण करके नित्य स्वभाव का आश्रय लेना पात्र जीव का परम कर्तव्य है।

प्रश्न ६१—मेरा आत्मा नित्य है और पर अनित्य है, तो 'पर मे' कौन कौन आता है ?

उत्तर—(१) अत्यन्त भिन्न पर पदार्थ अनित्य है। (२) औदारिक शरीर अनित्य है। (३) तजस कार्माण शरोर अनित्य है। (४) भाषा और मन अनित्य है। (५) शुभाशुभ अनित्य है। (६) अपूर्ण पूर्ण शुद्ध पर्याय का का पक्ष अनित्य है। (७) भेद कम का पक्ष अनित्य है। (८) अभेद कर्म का पक्ष अनित्य है। (९) भेदाभेद कर्म का पक्ष अनित्य है।

प्रश्न ६२—मेरी आत्मा ही नित्य है और ९ बोल तक सब अनित्य है इसको जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर—अपने नित्य ज्ञायक स्वभाव की दृष्टि करने से सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर क्रम से वृद्धि करके पूर्ण सिद्ध दशा की प्राप्ति होती है और जो ९ नम्बर तक जो अनित्य है उनसे लाभ नुकसान माने तो चारो गतियो में फिर कर निगोद की प्राप्ति होती है।

प्रश्न ६३—सर्वथा नित्य पक्ष के मानने मे क्या नुकसान है ?

उत्तर (१) सत् को सर्वथा नित्य मानने मे, परिणति का अभाव हो जावेगा।

(२) परिणति के अभाव मे तत्त्व, क्रिया, फल, कारक, कारण

कार्य कुछ भी नही बनेगा ।

प्रश्न ६४—सर्वथा नित्य पक्ष मानने से "तत्त्व" किस प्रकार नही बनेगा ?

उत्तर—परिणाम, सत् की अवस्था है और आप परिणाम का अभाव मानते हो. तो परिणाम के अभाव मे परिणामी (द्रव्य) का अभाव स्वयसिद्ध है ।

(२) व्यतिरेक के अभाव मे अन्वय (द्रव्य) अपनी रक्षा नही कर सकता । इस प्रकार "तत्त्व" के अभाव का प्रसग उपस्थित होवेगा ।

प्रश्न ६५—सर्वथा नित्य पक्ष मानने से 'क्रिया फल' आदि किस प्रकार नही बनेगे ?

उत्तर—आप तो वस्तु को सर्वथा कूटस्थ मानते हो । क्रिया फल कार्य आदि तो सब पर्याय मे होते है पर्याय की आप नास्ति मानते हो । इसलिए सर्वथा नित्य पक्ष मानने से क्रिया फल आदि नही बनने का प्रसग उपस्थित होवेगा ।

प्रश्न ६६—सर्वथा नित्य पक्ष मानने से "तत्त्व और क्रिया" दोनो कैसे नही बन सकेंगे ?

उत्तर—(१) मोक्ष का साधन जो सम्यग्दर्शनादि शुद्धभाव है वह परिणाम है । उन शुद्ध भावो का फल मोक्ष है । और मोक्ष भी निराकुलतारूप सुख रूप परिणाम है ।

(२) मोक्षमार्ग साधन और मोक्ष साध्यरूप, यह दोनो परिणाम हैं । और परिणाम आप मानते नही हो ।

(३) क्रिया के अभाव होने का प्रसग उपस्थित हो गया, क्योकि क्रिया पर्याय मे होती है ।

(४) मोक्षमार्ग और मोक्ष रूप परिणाम का कर्ता साधक आत्म-

द्रव्य है वह (आत्मा) विशेष के बिना (अभाव से) सामान्य भी नही बनेगा।

(५) इस प्रकार तत्त्व का अभाव ठहरता है। अर्थात् कर्ता कर्म, क्रिया, कोई भी कारक नही बनता है।

प्रश्न ३७—सर्वथा अनित्य पक्ष मानने मे क्या नुकसान है ?

उत्तर—(१) सत् को सर्वथा अनित्य मानने वालों के यहा सत् तो पहिले ही नाश हो जावेगा, फिर प्रमाण और प्रमाण का फल नही बनेगा।

(२) जिस समय वे सत् को अनित्य सिद्ध करने के लिए अनुमान प्रयोग मे यह प्रतिज्ञा बोलेगे कि "जो सत् है वह अनित्य है" तो यह कहना तो स्वय उनकी पकड का कारण हो जावेगा, क्योकि सत् तो है हो नही फिर "जो सत् है वह" यह शब्द कैसा ?

(३) सत् को नही मानने वाले उसका अभाव कैसे सिद्धकरेगे ? अर्थात् नही कर सकेगे।

(४) सत् को नित्य सिद्ध करने मे जो प्रत्यभिज्ञान प्रमाण है वह तो क्षणिक एकान्त (सवर्था) का बाधक है।

(५) वस्तु के अभाव मे परिणाम किसका ? इसलिए नित्य के अभाव मे अनित्य तो गधे के सीग के समान है।

प्रश्न ६८—नित्य-अनित्य के सम्बन्ध मे क्या रहा ?

—व्य और पर्याय दोनो को मानना चाहिए, क्योकि पर्याय जो कि अनित्य हैं उसे गौण करके, द्रव्य जो नित्य है उसका आश्रय लेकर धर्म की शुरुआत करके क्रम से पूर्णता को प्राप्त करे।

प्रश्न ६९—अनेकान्त वस्तु को नित्य-अनित्य बताने से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—आत्मा स्वय नित्य है और स्वय ही पर्याय से अनित्य है,

उसमे जिस ओर की रुचि, उस ओर का परिणाम होता है। नित्य वस्तु की रुचि करे तो नित्य स्थायी ऐसी वीतरागता की प्राप्ति होती है। और अनित्य पर्याय की रुचि करे तो क्षणिक राग द्वेष उत्पन्न होते है।

प्रश्न ७०—तत्-अतत् मे किस बात का विचार किया जाता है ?

उत्तर—नित्य-अनित्य मे बतलाये हुए परिणमन स्वभाव के कारण वस्तु मे जो समय समय का परिणाम उत्पन्न होता है वह परिणाम सद्रश्य है या विसदृश्य है इस का विचार तत्-अतत् मे किया जाता है।

प्रश्न ७१—तत् किसे कहते है ?

उत्तर—परिणमन करती हुई वस्तु "वही की वही है, दूसरी नही" इसे तत्भाव कहते है।

प्रश्न ७२—अतत् किसे कहते हैं ?

उत्तर—परिणमन करती हुई वस्तु समय समय में नई २ उत्पन्न हो रही है। 'वह की वह नही है' इसको अतत् भाव कहते है। इस दृष्टि से प्रत्येक समय का सत् ही भिन्न २ रूप है।

प्रश्न ७३—तत् धर्म का क्या लाभ है ?

उत्तर—इससे तत्त्व की सिद्धि होती है।

प्रश्न ७४—अतत् धर्म से क्या लाभ है ?

उत्तर—इससे क्रिया, फल, कारक, साधन, साधन, साध्य, कारण कार्य आदि भावों की सिद्धि होती हैं।

प्रश्न ७५—तत्-अतत् का अनेकान्त क्या है ?

उत्तर—प्रत्येक वस्तु मे वस्तुपने की सिद्धि करने वाली तत्-अतत् आदि परस्पर विरुद्ध दो शक्तियो का एक ही साथ प्रकाशित

होना उसे अनेकान्त कहते हैं।

प्रश्न ७६—आत्मा में तत्-अतत्पना क्या है ?

उत्तर—(१) आत्मा 'वह का वही है' यह तत्पना है।
(२) बदलते २ 'यह वह नही है' यह अतत्पना है।

प्रश्न ७७—आत्मा तत् रूप से हैं, अतत् रूप से नही, इसको जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर—आत्मा में तत-अतत्पना दोनो पाये जाते हैं अतत्पने को गौण करके तत् धर्म की ओर दृष्टि करने से सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर क्रम से निर्वाण की प्राप्ति होती है।

प्रश्न ७८—'अतत्' मे कौन २ आता है ?

उत्तर (१) अत्यन्त भिन्न पर पदार्थ अतत् है। (२) आख नाक कान औदारिक शरीर अतत् है। (३) तैजस कार्माण शरीर अतत् है। (४) शब्द और मन अतत् है। (५) शुभाशुभ भाव अतत् है। (६) अपूण पूर्ण शुद्ध पर्याय का पक्ष अतत् है। (७) भेद कर्म का पक्ष अतत् है। (८) अभेद कर्म का पक्ष अतत् है। (९) भेदाभेद कर्म का पक्ष अतत् हैं। (१०) ज्ञान की पर्याय अतत् है।

एक मात्र अपना त्रिकाली आत्मा 'वह का वह' तत् है इस पर दृष्टि देते ही अपने भगवान का पता ,चल जाता है क्रम से पूर्ण लक्ष्मी का नाथ बन जाता है। और अतत् से मेरा भला है या नुकसान है ऐसी मान्यता से चारो गतियो मे घूमकर निगोद का पात्र बन जाता है।

प्रश्न ७९—एक अनेक पना क्या है ?

उत्तर—अखड सामान्य की अपेक्षा से द्रव्य सत् एक है। और अवयवो की अपेक्षा से द्रव्य सत् अनेक भी हैं।

प्रश्न ८०—सत् एक है इसमे क्या युक्ति है ?

उत्तर—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से, गुण, कारणशुध्दपर्याय से, अभिन्न प्रदेशी होने से सत् एक है; इसलिए अखड की अपेक्षा से सत् एक है।

प्रश्न ८१—द्रव्य से सत् 'एक' कैसे है ?

उत्तर—गुण कारण, शुध्द पर्यायो का एक तन्मय पिण्ड है इसलिए एक है, इसलिए द्रव्य से सत् एक है।

प्रश्न ८२—क्षेत्र से सत् 'एक' कैसे है ?

उत्तर—जिस समय, जिस द्रव्य के एक देश मे, जो, सत् स्थित है, उसी समय, उसी द्रव्य के सब देशो मे (क्षेत्रो मे) भी' 'उतना, वही, वैसा ही' स्थित इस अपेक्षा सत् क्षेत्र से एक है।

प्रश्न ८३—काल से सत् 'एक' कैसे है ?

उत्तर—एक समय मे रहने वाला, जो जितना और जिस प्रकार का सम्पूर्ण सत् है, वही, उतना और उसी प्रकार का सम्पूर्ण सत् सब समयो मे भी है वह सदा अखण्ड है। इस अपेक्षा सत् काल से एक है।

प्रश्न ८४—भाव से सत् 'एक' कैसे है ?

उत्तर—सत् सब गुणो का तादात्म्य एक पिण्ड है। गुणो के अतिरिक्त और उसमें, कुछ है ही नही। किसी एक गुण की अपेक्षा जितना सत् है, प्रत्येक गुण की अपेक्षा भी वह उतना ही है। समस्त गुणो की अपेक्षा भी वह उतना ही है। इस अपेक्षा सत् भाव से एक है।

प्रश्न ८५—सत् के अनेक होने मे क्या युक्ति है?

उत्तर—व्यतिरेक बिना अन्वय पक्ष नही रह सकता अर्थात् अवयवों के अभाव मे अवयवी का भी अभाव ठहरता है। ततः अवयवों की

अपेक्षा से सत् अनेक भी हैं। ५

प्रश्न ८६—द्रव्य से सत् 'अनेक' कैसे हैं?

उत्तर—गुण अपने लक्षण से हैं, पर्याय अपने लक्षण से हैं। प्रत्येक अवयव अपने अपने लक्षण से भिन्न २ हैं प्रदेशभेद नही हैं अत. सत् द्रव्य से अनेक हैं।

प्रश्न ८७—क्षेत्र से सत् 'अनेक' कैसे है?

उत्तर—प्रत्येक देशाश का सत् भिन्न-भिन्न है। इस अपेक्षा क्षेत्र से अनेक भी हैं, सर्वथा नही।

प्रश्न ८८—काल से सत् 'अनेक' कैसे है?

उत्तर—पर्याय दृष्टि से प्रत्येक काल (पर्याय) का सत् भिन्न-भिन्न हैं। इस प्रकार सत् काल की अपेक्षा अनेक हैं।

प्रश्न ८९—भाव की अपेक्षा सत् 'अनेक' कैसे है?

उत्तर—प्रत्येक भाव (गुण) अपने अपने लक्षण से भिन्न-भिन्न हैं प्रदेश भेद नही हैं। इस प्रकार सत् भाव की अपेक्षा अनेक है।

प्रश्न ९०—एक-अनेक पर अनेकान्त किस प्रकार लगता है?

उत्तर—(१) आत्मा (प्रत्येक द्रव्य) द्रव्य की अपेक्षा एक हैं अनेक नही है यह अनेकान्त है।

(२) आत्मा (प्रत्येक द्रव्य) गुण पर्यायो की अपेक्षा अनेक है एक नही है यह अनेकान्त हैं।

प्रश्न ९१—आत्मा द्रव्य की अपेक्षा एक भी है और अनेक भी है क्या यह अनेकान्त नही हैं?

उत्तर—यह मिथ्या अनेकान्त है।

प्रश्न ९२—द्रव्य, पर्याय की अपेक्षा अनेक भी है और एक भी है क्या यह अनेकान्त ठीक है?

२ उत्तर—यह मिथ्या अनेकान्त है।

प्रश्न ६३—एक, अनेक को जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर—गुण और पर्यायो में जो अनेकपना है उसे गौण करके एक अभेद का आश्रय ले तो तुरन्त सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होती है और क्रम से निर्वाण की ओर गमन होता है।

प्रश्न ६४—अनेकपना मे क्या २ आता है, जिस की ओर दृष्टि करने से चारो गतियो मे घूमकर निगोद जाना पड़ता है ?

उत्तर—(१) अत्यन्त भिन्न पर पदार्थ अनेक है। (२) आख, नाक, कान, औदारिक शरीर अनेक हैं। (३) तैजस कार्माण शरीर अनेक हैं। (४) मन और शब्द अनेक है। (५) शुभाशुभ भाव अनेक हैं। (६) अपूण पूर्ण शुध्द पर्याय का पक्ष अनेक है। (७) भेद कर्म का पक्ष अनेक है। (८) अभेद कर्म का पक्ष अनेक है। (९) भेदाभेद कर्म का पक्ष अनेक है। (१०) गुणभेद अनेक हैं।

अनेक की ओर दृष्टि करन से मेरा भला है या बुरा है ऐसी मान्यता चारो गतियो मे घुमाकर निगोद मे ले जाती है। और इन सबसे दृष्टि उठा कर एक अभेद भगवान ज्ञायक पर दृष्टि देने से धर्म की प्राप्ति होती है।

प्रश्न ६५—स्याद्वाद किसे कहते है ?

उत्तर—वस्तु के अनेकान्त स्वरूप को समझाने वाली कथन पध्दति को स्याद्वाद कहते है।

प्रश्न ६६—स्याद्वाद का अर्थ क्या है ?

उत्तर—स्यात् = कथचित्, किसी प्रकार से, किसी सम्यक् अपेक्षा

मे, वाद = कथन करना।

प्रश्न ९७ –स्याद्वाद और अनेकान्त में कैसा सम्बन्ध है?

उत्तर—द्योत्य द्योतक सबन्ध है, वाच्य-वाचक सबध नही है।

प्रश्न ९८—वाच्य-वाचक सबध किसे कहते हैं?

उत्तर—जैसा शब्द हो, वैसा ही पदार्थ हो उसे वाच्य-वाचक सबध कहते है। जेसे शक्कर शब्द हुआ यह वाचक है, शक्कर पदार्थ वाच्य है। और जैसे गुरु ने कहा आत्मा, तो यह वाचक है और आत्मा पदार्थ दृष्टि में आवे तो वह वाच्य है।

प्रश्न ९९—द्योत्य, द्योतक सबध किसमे होता है?

उत्तर—स्याद्वाद और अनेकान्त मे होता है। स्याद्वाद=द्योतक बतलाने वाला है। और अनेकान्त = वस्तु स्वरुप है, द्योत्य है, बताने योग्य है।

प्रश्न १००—द्योत्य और द्योतक सबध समझ मे नही आया, कृपया जरा स्पष्ट कीजिए?

उत्तर—आत्मा स्व की अपेक्षा से अस्ति है और पर की अपेक्षा से नास्ति है। यह अस्ति-नास्ति दोनो धर्म एक साथ पाये जाते है परन्तु कथन दोनो का एक साथ नही हो सकता है। जैसे 'आत्मा' स्व की अपेक्षा से है ऐसा कथन किया, वहा 'आत्मा' पर की अपेक्षा नही है यह नही कहा गया परन्तु गौण हो गया—ऐसी कथन शैली को स्याद्वाद कहते हैं। इसलिए अनेकान्त को द्योत्य और स्याद्वाद को द्योतक कहते हैं।

प्रश्न १०१—द्योत्य-द्योतक सबध कब है?

उत्तर—वस्तु में अनेक धर्म है। जब एक एक धर्म का कथन किया जावे, दूसरा धर्म गौण होवे, तब द्योत्य-द्योतक सम्बन्ध है।

प्रश्न १०२—सप्तभगी कैसे प्रगट होती है ?

उत्तर—जिसका कथन करना है उस धर्म को मुख्य करके उसका कथन करने से, और जिसका कथन नही करना है उस धर्म को गौण करके, उसका निषेध करने से सप्तभगी प्रगट होती है ।

प्रश्न १०६—सप्तभगी कितने प्रकार की है ?

उत्तर—दो प्रकार की है ।

(१) वक्ता के अभिप्राय को एक धर्म द्वारा कथन करके बताना हो तो उसे नय सप्तभगी कहते हैं ।

(२) वक्ता के अभिप्राय को सारे वस्तुस्वरुप द्वारा कथन करके बताना हो तो प्रमाण सप्तभगी हैं ।

प्रवचनसार मे नय सप्तभगी का और पचास्तिकाय में प्रमाण सप्तभगी का कथन किया है ।

प्रश्न १०४—सामान्य और विशेष को जानने से दुख कैसे मिटे, और सुख कैसे प्रगटे ?

उत्तर—(१) वस्तु मे नित्य धर्म है जिसके कारण वस्तु अवस्थित है इस धर्म को जानने से पता चलता है कि द्रव्य रूप मे मोक्ष वस्तु मे (आत्मा में) वर्तमान मे विद्यमान ही है तो फिर उसका आश्रय करके कैसे प्रगट नही किया जा सकता ? अर्थात् किया जा सकता है ।

(२) अनित्य धर्म से पता चलता है कि पर्याय मे मिथ्यात्व है राग है, द्वेष है, दुख है । साथ ही यह पता चल जाता है कि परिणमन स्वभाव द्वारा बदल कर सम्यक्त्व, वीतरागता और सुख रूप परिवर्तित किया जा सकता है ।

(३) भव्य जीव नित्य स्वभाव का आश्रय करके पर्याय के दुख

को सुख मे बदल देता है। इसलिए सामान्य और विशेष को जानने से दुख का अभाव और सुख की प्राप्ति होती है।

प्रश्न १०५—कोई वस्तु को सर्वथा नित्य ही मानले तो क्या होगा ?

उत्तर— निश्चयभासी बन जावेगा।

प्रश्न १०६— कोई वस्तु को सर्वथा अनित्य ही मान ले तो क्या होगा ?

उत्तर— मूलतत्त्व ही जाता रहेगा और बौद्ध मत का प्रसग बनेगा। इसलिए सामान्य विशेष दोनो को जान कर पर्याय को गौण करके द्रव्यस्वभाव का आश्रय लेकर धर्म प्रगट करना पात्र जीव का कर्तव्य है।

प्रश्न १०७—क्या प्रमाण सप्तभगी को जानने से कल्याण नही होता है ?

उत्तर—अवश्य होता है,

प्रश्न १०८—प्रमाण सप्तभगी को जानने से कल्याण कैसे होता है ?

उत्तर—प्रमाण सप्तभगी द्रव्यो पर लगाई जाती है।

[अ] (१)मेरी आत्मा अपने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से अस्ति है। (२)मेरी आत्मा तत् है। (३)मेरी आत्मा नित्य है। (४) मेरी आत्मा एक है।

[आ] मेरी आत्मा की अपेक्षा बाकी बचे हुए, अनन्त आत्मा, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म अधर्म, आकाश एकेक और लोक प्रमाण असख्यात कालद्रव्य –(१) पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से नास्ति है। (२)सब पर अतत् है। (३)सब पर अनित्य है। (४) सब पर अनेक है।

ऐसा जानते ही दृष्टि एकमात्र अपने स्वभाव पर आ जाती

है ऐसा ज्ञानी जानते है। क्योंकि जब पर की ओर देखना नही रहा तो पर्याय में राग द्वेष भी उत्पन्न नही होगा, दृष्टि एकमात्र स्वभाव पर होने से धर्म की प्राप्ति हो जाती है। इस प्रथम प्रकार के भेद विज्ञान से पर्याय मे भी भेदविज्ञान आ जाता है ऐसा ज्ञानी जानते है मिथ्यादृष्टि नही जानते है।

इस प्रकार पात्र जीव प्रमाण सप्तभगी को जानने से धर्म की प्राप्ति करके क्रम से निर्वाण का पात्र बन जता है।

प्रश्न १०६—नयसप्तभगी जानने से कैसे कल्याण हो ?

उत्तर—नय सप्तभगी वह कर सकता है जिसने मोटे रूप से, पर द्रव्यो से तो मेरा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नही है।

[अ] (१) अनन्त गुण सहित अभेद परम पारिणामिक ज्ञायक भाव अपने द्रव्य क्षेत्र काल भाव अस्ति है। (२) ज्ञायक भाव तत् है। ३) ज्ञायक भाव नित्य है (४) ज्ञायक भाव एक है।

[आ] (१) इस त्रिकाली ज्ञायक की अपेक्षा पर्याय मे विकारी भाव, अपूर्णपूर्ण शुध्द पर्याय, गुणभेद कल्पना आदि पर द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव से नास्ति है। (२) विकारी भाव, अपूर्ण पूर्ण शुद्ध पर्याय गुण भेद कल्पना आदि सब अतत् है। (३) विकारी भाव, अपूर्ण पूर्ण शुद्ध पर्याय, गुण भेद कल्पना आदि अनित्य हैं। (४) विकारी भाव, अपूर्ण पूण शुद्ध पर्याय, गुण भेद कल्पना आदि अनेक हैं।

ऐसा अपनी आत्मा का एक अनेकात्मक स्थिति जानकर पात्र जीव तुरन्त अपने द्रव्य क्षेत्र का भाव से अस्ति तत्, नित्य, एक स्वभाव की ओर दृष्टि करके सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करके क्रम से अपने में एकाग्रता करके परम मोक्ष लक्ष्मी का नाथ बन जाता है।

प्रश्न ११०—प्रमाण सप्तभंगी, नयसप्तभंगी का ज्ञान किसको होता है और किसको नहीं ?

उत्तर--ज्ञानियो को ही इन दोनों का ज्ञान वर्तता है। मिथ्यादृष्टि द्रव्यलिंगीमुनि को इनमें से एक का भी ज्ञान नहीं वर्तता है।

प्रश्न १११—एकान्त के कितने भेद हैं ?

उत्तर—दो भेद हैं; (१) सम्यक् एकात और (२) मिथ्या एकान्त।

प्रश्न ११२—सम्यक् एकान्त और मिथ्या एकान्त क्या है, जरा खोलकर समझाइये ?

उत्तर (१) अपने स्वरूप से अस्तित्व और पर रूप से नास्तित्व आदि जो वस्तु स्वरूप है, उसकी अपेक्षा रखकर प्रमाण द्वारा जाने हुए पदार्थ के एक देश का (पक्ष का) विषय करने वाला नय, सम्यक् एकान्त है।

(२) किसी वस्तु के एक धर्म का निश्चय करके उसमे रहने वाले अन्य धर्मों का सर्वथा निषेध करना वह मिथ्या एकान्त है।

प्रश्न ११३—सम्यक् एकान्त के और मिथ्या एकान्त के दृष्टान्त दो ?

उत्तर—(१) "सिद्ध भगवान एकान्त सुखी हैं" ऐसा जानना वह सम्यक् एकान्त है। क्योकि "सिद्ध जीवो को बिल्कुल दुख नही है" ऐसा गर्भित रूप से उसमें आ जाता है।

"सर्वजीव एकान्त सुखी है" ऐसा जानना मिथ्या एकान्त है; क्योकि वर्तमान मे अज्ञानी जीव दुखी है, इसका उसमें अस्वीकार है।

(२) "सम्यग्ज्ञान ही धर्म है" ऐसा जानना सम्यक् एकान्त है, क्योकि "सम्यग्ज्ञान पूर्वक वैराग्य होता है" ऐसा उसमें गर्भित रूप से आ जाता है।

"स्त्रीपुत्रादिक का त्याग ही" धर्म है ऐसा जानना वह मिथ्या-एकान्त है, क्योकि त्याग के साथ सम्यग्ज्ञान होना ही चाहिए ऐसा इसमे नही आता है।

प्रश्न ११४—क्या आत्मा को शुभभाव से ही धर्म होता है यह सम्यक् एकान्त है ?

उत्तर—बिल्कुल नही यह तो मिथ्या एकान्त है क्योकि इसमे शुद्धभाव का निषेध किया है।

प्रश्न ११५—क्या शुद्धभाव से ही धर्म होता है यह तो मिथ्या एकान्त है ?

उत्तर—बिल्कुल नही, यह तो सम्यक् एकान्त है। शुद्धभाव से ही धर्म होता है, यह अर्पित कथन है और शुभभाव से नही, यह अनर्पित कथन इसमे आ ही जाता है।

प्रश्न ११६ मिथ्या एकान्त के दृष्टान्त दीजिए ?

उत्तर—(१) आत्मा सर्वथा नित्य ही है। (२) आत्मा सवथा अनित्य ही है। (३) आत्मा सर्वथा एक ही है। (४) आत्मा सर्वथा अनेक ही है। (५) आत्मा को शुभभाव से ही धर्म होना है। (६) भगवान का दर्शन ही सम्यक्त्व है। (७) अणुव्रतादि का पालन करना ही श्रावकपना है। (८) २८ मूलगुण पालन करना ही मुनिपना है। (९) चार हाथ जमीन देखकर चलना ही ईर्या समिति है। (१०) भूखा रहना ही क्षुधा परिषह है।

यह सब मिथ्या एकान्त है क्योकि इनमे अन्य धर्मो का सर्वथा निषेध पाया जाता है।

प्रश्न ११७ -अनेकान्त के समयसार आदि शास्त्रो मे कितने बोल कहे है ?

उत्तर—१४ बोल कहे है।

कहा है ?

उत्तर—१४ बार पशु कहा है।

प्रश्न ११९—इन १४ बोलो के अनेकान्त-स्याद्वाद स्वरूप को समझले तो क्या होता है ?

उत्तर—(१) जो जीव भगवान के कहे हुए १४ बोल अनेकान्त-स्याद्वाद के स्वरूप को समझले तो वह जीव श्री समयसार जी मे आये हुए गा० ५० से ५५ तक वर्णादिक २९ बोलो से रहित अपने एक मात्र भूतार्थ स्वभाव का आश्रय लेकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति कर क्रमश मोक्ष को प्राप्त करता है।

(२) पचम पारिणामिक भाव का महत्व आजाता है, और चार भावो की महिमा छूट जाती है।

(३) चारो गति के अभाव रूप पचम गति की प्राप्ति होती है।

(४) मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग यह पाच ससार के कारणो का अभाव हो जाता है।

(५) द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव ऐसे पाच परावर्तनो का अभाव हो जाता है।

(६) पचपरमेष्ठियो मे उसकी गिनती होने लगती है।

(७) १४ वा गुणस्थान प्राप्त होकर सिद्ध दशा की प्राप्ति होती है।

(८) आठो कर्मो का अभाव हो जाता है।

(९) सम्पूर्ण दुखो का अभाव होकर सम्पूर्ण सुखी हो जाता है।

प्रश्न १२०—जो १४ बोल रूप अनेकान्त-स्याद्वाद स्वरूप को न समझे तो क्या होगा ?

उत्तर—(१) समयसार मे भगवान ने उसे पशु कहा है।

(२) आत्मावलोकन पृष्ठ १४३ मे हरामजादी पना कहा है।

(३) प्रवचनसार में पद पद पर धोखा खाता है।

(४) पुरुषार्थ सिद्धि उपाय मे वह जिनवाणी सुनने के अयोग्य है।

(५) समयसार में वह संसार परिभ्रमण का कारण कहा है।

(६) समयसार कलश ५५ में यह अज्ञान मोह अज्ञान अंधकार है उसका सुलटना दुर्निवार है।

(७) मिथ्यादर्शनादि की पुष्टि करता हुआ चारो गतियो मे घूमता हुआ निगोद में चला जाता है।

प्रश्न १२१—एक अनेक, नित्य अनित्य, सत् असत् आदि क्या है?

उत्तर—धर्म है गुण नही है।

प्रश्न १२२—धर्म और गुण में क्या अन्तर है?

उत्तर—गुणो को धर्म कह सकते हैं परन्तु धर्मों को गुण नहीं कह सकते हैं। क्योकि .

(१) अस्तित्व, वस्तुत्व आदि सामान्य, विशेष गुण होते है उनकी पर्याये होती है।

(२) नित्य-अनित्य, तत् अतत् आदि धर्म है उनकी पर्याये नही होती है यह अपेक्षित धर्म है।

प्रश्न ११४—अनेकान्त का क्या प्रयोजन है?

उत्तर—अनेकान्त मार्ग भी सम्यक् एकान्त ऐसे निजपद की प्राप्ति कराने के सिवाय अन्य किसी भी हेतु से उपकारी नही है।

एक काल में देखिए, अनेकान्त का रूप।
एक वस्तु में नित्य ही, विधि-निषेध स्वरूप॥
व्यवहारनय अभूतार्थ दर्शित, शुद्धनय भूतार्थ है।
भूतार्थ आश्रित आत्मा, सदृष्टि निश्चय होय है॥

॥इति॥

॥ श्री वीतरागायनमः ॥

मोक्ष मार्ग अधिकार

शिव उपाय करते प्रथम, कारन मंगल रूप।
विघन विनाशक सुखकरन, नमौं शुद्ध शिवभूप ॥१॥
इस भवतरुका मूल इक, जानहु मिथ्याभाव।
ताकौ करि निर्मूल अब, करिए मोक्ष उपाय ॥२॥

प्रश्न १—मोक्ष क्या है ?

उत्तर—"मोक्ष कहे निज शुद्धता" अर्थात् परिपूर्ण शुद्धि का प्रकट होना वह मोक्ष है और मोक्ष आत्मा की परिपूर्ण शुद्ध दशा है।

प्रश्न २—मोक्ष कैसे होता है ?

उत्तर—संवर, निर्जरा पूर्वक ही मोक्ष होता है।

प्रश्न ३—संवर, निर्जरा और मोक्ष अस्तिसूचक है, या नास्ति-सूचक है ?

उत्तर—सम्वर, निर्जरा और मोक्ष नास्ति सूचक नाम है।

प्रश्न ४—भाव संवर की, नास्ति-अस्ति सूचक परिभाषा क्या है ?

उत्तर—शुभाशुभ भाव का उत्पन्न ना होना, नास्ति से भाव संवर है। और शुद्धि का प्रगट होना, अस्ति से भाव संवर है।

प्रश्न ५—भाव निर्जरा की, नास्ति-अस्ति सूचक परिभाषा क्या है ?

उत्तर—अशुद्धि की हानि, नास्ति से भाव निर्जरा है। और शुद्धि की वृद्धि, अस्ति से भाव निर्जरा है।

प्रश्न ६—भाव मोक्ष की, नास्ति-अस्ति सूचक परिभाषा क्या है ?

उत्तर—सम्पूर्ण अशुद्धि का अभाव, नास्ति से भाव मोक्ष है। और सम्पूर्ण शुद्धि का प्रगट होना, अस्ति से भाव मोक्ष है।

प्रश्न ७—भाव संवर निर्जरा, किसके अभाव रूप प्रगट होती है ?

उत्तर—आस्रव, बंध के अभाव रूप सवर निर्जरा प्रगट होती है।

प्रश्न ८—भाव आस्रव किसे कहते हैं ?

उत्तर—जीव में जो विकारी शुभाशुभभावरूप अरुपी अवस्था होती है वह भाव आस्रव है।

प्रश्न ९—भाव बध किसे कहते हैं ?

उत्तर—आत्मा के अज्ञान, राग-द्वेष, पुण्य पाप रूप विभाव में रुक जाना वह भावबध है।

प्रश्न १०—आस्रव, बध का अभाव और सवर निर्जरा की प्राप्ति किसमे होती है ?

उत्तर—जीव मे होती है इसलिए जीव तत्त्व की जानकारी भी आवश्यक है।

प्रश्न ११—जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर—जीव अर्थात् आत्मा। वह सदैव ज्ञाता स्वरूप पर से भिन्न और त्रिकाल स्थायी है।

प्रश्न १२—आस्रव, बध किसके निमित्त से होते हैं ?

उत्तर—अजीव के निमित्त से होते हैं। अतः अजीव की जानकारी भी आवश्यक है।

प्रश्न १३—अजीव किसे कहते हैं ?

उत्तर—जिसमे चेतना-ज्ञातृत्व नही, ऐसे द्रव्य पाच हैं। उनमे धर्म

अधर्म, आकाश और काल चार अरूपी है और पुद्गल रूपी है।

प्रश्न १४—इन सात तत्त्वों में द्रव्य कौन हैं और पर्याय कौन हैं?

उत्तर—सात तत्त्वों में प्रथम दो तत्त्व 'जीव' और 'अजीव' वह द्रव्य हैं और अन्य पांच तत्त्व जीव और अजीव की संयोगी और वियोगी पर्यायें हैं। आस्रव और बंध संयोगी पर्यायें हैं। तथा संवर, निर्जरा और मोक्ष ये जीव-अजीव की वियोगी पर्यायें हैं।

प्रश्न १५—अजीव की संयोगी वियोगी पर्यायों का क्या २ नाम है और क्या २ परिभाषा है?

उत्तर—द्रव्यआस्रव =नवीन कर्मों का आना।

द्रव्य बंध =नवीन कर्मों का स्वयं स्वतः बंधना।

द्रव्य संवर =कर्मों का आना स्वय स्वतः रुक जाना।

द्रव्य निर्जरा=जड कर्म का अंशतः खिर जाना।

द्रव्य मोक्ष =द्रव्य कर्मों का आत्म प्रदेशो से अत्यन्त अभाव होना।

प्रश्न १६—जीव और अजीव की पर्यायों में कैसा सम्बन्ध है?

उत्तर—निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है। निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध परस्पर की परतंत्रता का सूचक नहीं है, परन्तु नैमित्तिक के साथ कौन निमित्त रूप पदार्थ है उसका वह ज्ञान कराता है क्योंकि जहां उपादान होता है वहा निमित्त नियम से होता ही है ऐसा वस्तु स्वभाव है। कहा है: "उपादान निज गुण जहाँ, तह निमित्त पर होय, भेदज्ञान प्रमाण विधि, विरला बूझे कोय।।

१७—संयोगी वियोगी पर्यायो से क्या तात्पर्य है?

उत्तर—आस्रव और बध सयोगी है और सवर, निर्जरा और मोक्ष

जीव-अजीव की वियोगी पर्यायें हैं

प्रश्न १८—जीव का प्रयोजन क्या है ?

उत्तर—जिसके द्वारा सुख उत्पन्न हो और दुख का नाश हो उस काय का नाम प्रयोजन है।

प्रश्न १९—दुख का नाश और सुख की उत्पत्ति किस के द्वारा हो सकती है ?

उत्तर—सात तत्त्वो के सच्चे श्रद्धान के आश्रित ही दुख का नाश और सुख की प्राप्ति हो सकती है।

२०—सात तत्त्वो के सच्चे श्रद्धान मे ही दुख का अभाव सुख की प्राप्ति कैसे हो सकती है ?

उत्तर—(१) जीव-अजीव का यथार्थ श्रद्धान करने पर स्व-पर का श्रद्धान होता है और उससे सुख उत्पन्न होता है। जिसका अयथार्थ श्रद्धान करने पर स्व-पर का श्रद्धान न हो। रागादिक को दूर करने का श्रद्धान न हो और उससे दुख उत्पन्न हो; इसलिए आस्रव, बध, सवर, निर्जरा और मोक्ष सहित जीव-अजीव तत्त्व प्रयोजन भूत समझने चाहिए। आस्रव और बध दुख के कारण है तथा सवर, निर्जरा और मोक्ष सुख के कारण है, इसलिए जीवादि सात तत्त्वो का श्रद्धान करना आवश्यक है इन सात तत्त्वो की सच्ची श्रध्दा के बिना दुख का अभाव और सुख की प्राप्ति नही हो सकती है।

प्रश्न २१—मोक्ष मार्ग प्राप्त करने के लिए किस पर अधिकार मानना चाहिए ?

उत्तर—एक मात्र 'जो सकल निरावरण-अखड-एक-स्वरूप प्रत्यक्ष प्रतिभासमय-अविनश्वर - शुध्द - पारिणामिक-परमभाव लक्षण निज परमात्म द्रव्य स्वरूप जो अपना आत्मा है उस पर अधिकार

करने से ही सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर, क्रम से बृध्दि करके, परिपूर्ण मोक्ष की प्राप्ति होती है।

प्रश्न २२—अनादिकाल से अज्ञानी जीव ने किस किस का अधिकार माना, जिससे उसे सवर निर्जरा मोक्ष की प्राप्ति नही हुई ?

उत्तर—(१) अत्यन्त भिन्न पर पदार्थो पर अपना अधिकार माना। (२) आख नाक कान रूप औदारिक शरीर पर अपना अधिकार माना। (३) तैजस कार्माण शरीरो पर अपना अधिकार माना। (४) भाषा और मन पर अपना अधिकार माना। (५) शुभाशुभ विकारी भावो मे अपना अधिकार माना। (६) अपूर्ण, पूर्ण शुध्द पर्याय के पक्ष पर अपना अधिकार माना। (७) भेदकर्म के पक्ष पर अपना अधिकार माना। (८) अभेदकर्म के पक्ष पर अपना अधिकार माना। (९) भेदाभेद कर्म के पक्ष पर अपना अधिकार माना। इसलिए सवर, निर्जरा और मोक्ष को प्राप्ति नही हुई।

प्रश्न २३—नौ प्रकार के पक्षो पर अधिकार मानने से क्या होता है ?

उत्तर—अनादिकाल से एक एक समय करके चारो गतियो में घूमता हुआ निगोद की सैर करता है और प्रत्येक समय महा दुखी होता है।

प्रश्न २४—आत्मा का अधिकार किसमें है और किसमे नहीं है ?

उत्तर—आत्मा का अधिकार अपने अनन्त गुणो के पिण्ड ज्ञायक भाव पर ही है और नौ प्रकार के पक्षो पर अधिकार नहीं है।

प्रश्न २५—शरीर में बीमारी आ जावे, लड़का मर जावे, धन नष्ट हो जावे, चला न जावे, तो हम क्या करे, जिससे शान्ति प्राप्त हो ?

उत्तर—जो सिध्द भगवान करते हैं वह करे तो शान्ति कीप्राप्ति हो। जैसे—हौस्पिटल में ५० मरीज मर जावे तो क्या डाक्टर रोयेगा ? आप कहोगे नहीं, परन्तु जानेगा और देखेगा क्योंकि इन पर मेरा अधिकार नहीं है; उसीप्रकार शरीर मे बीमारी आवे, स्त्री मर जावे, धन नष्ट हो जावे, तो जानो इन पर हमारा अधिकार नही है ऐसा जाने माने तो शान्ति आ जावेगी और उनपर अपना अधिकार मानेगा तो दुखी होकर चारों गतियो मे घूमता हुआ निगोद मे चला जावेगा।

प्रश्न २६—आपने तो पूर्ण अपूर्ण शुध्द पर्याय पर भी अपना अधिकार माने तो चारो गतियो मे घूमकर निगोद में चला जावेगा ऐसा कहा है। जबकि ज्ञानी तो शुध्द पर्याय पर ही अपना अधिकार मानते है ?

उत्तर—चौथे गुणस्थान से लेकर सब ज्ञानी एक मात्र अपने त्रिकाली भगवान पर ही अपना अधिकार मानते हैं। अपूर्ण पूर्ण शुध्द पर्याय पर भी ज्ञानी अपना अधिकार नही मानते हैं, पर और विकारी भावो की तो बात ही नही है।

प्रश्न २७—पूर्ण अपूर्ण शुध्द पर्याय के आश्रय से मेरा भला हो ऐसा मानने वाला कौन है ?

उत्तर—मिथ्यादृष्टि चारो गतियो मे घूमकर निगोद का पात्र है।

प्रश्न २८—ज्ञानियो को औपशमिक, क्षयोपशमिक और क्षायिक भाव जो धर्म रूप है, क्या उनकी भावना नही होती है ?

उत्तर—ज्ञानियो को एक मात्र परम पारिणामिक भाव की ही भावना होती है उसके फल स्वरूप औपशमिक, क्षायिक और क्षयोपशमिक भाव पर्याय में उत्पन्न होते है। परन्तु औपशमिक, क्षयोपशमिक

और क्षायिक भावो की भावना नही होती है।

प्रश्न २९—ज्ञानियो को पर्याय मे तो औपशमिक, क्षयोपशमिक और क्षायिक भाव होते हैं और औदयिक भाव भी होते हैं। और आप कहते हैं कि ज्ञानियो को उनकी भावना नहीं है ?

उत्तर—अरे भाई, पर्याय में औपशमिकादिक भावों का होना अलग बात है, और उसकी भावना करना अलग बात है; क्योंकि ज्ञानी श्रद्धा में एक मात्र अपने परमपारिणामिक ज्ञायक भाव को ही स्वीकार करते हैं निमित्त भगभेद अपूर्ण पूर्ण शुद्ध पर्याय को नही स्वीकार करते हैं।

धर्मी अपने सम्यग्ज्ञान में परमपारिणामिक अपने जीव को आश्रय करने योग्य जानता है। औपशमिक, धर्म का क्षयोपशमिकभाव और क्षायिक भाव अर्थात् सवर, निर्जरा और मोक्ष को प्रगट करने योग्य जानता है। औदयिक भाव अर्थात् आस्रव बध को हेय रूप जानता है। इस प्रकार ज्ञानियो को तो मात्र भावना अपने ज्ञायक की ही वर्तती है और की नही।

प्रश्न ३०—मोक्ष मार्ग शब्द मे 'मार्ग' का क्या अर्थ है ?

उत्तर—मार्ग अर्थात् रास्ता।

प्रश्न ३१—अज्ञानी मोक्ष मार्ग अर्थात् मोक्ष का रास्ता कहां खोजता है ?

उत्तर—जैसे हिरन की नाभि मे कस्तूरी है वह बाहर खोजता है; उसीप्रकार अज्ञानी बाहरी क्रियाओं में, विकारी भावों में, मोक्ष-मार्ग मानता है।

प्रश्न ३२—बाहरी क्रियाओं में और शुभभावो में जो मोक्षमार्ग

मानता है उसे जिनवाणी में क्या २ कहा है ?

उत्तर—नपुंसक, व्यभिचारी, मिथ्यादृष्टि, असयमी, पापी, अन्यमत वाला, हरामजादीपना, आदि कहा है।

(२) पचास्तिकाय गा० १६८ में मिथ्यादृष्टि का शुभराग सर्व अनर्थ परम्पराओं रूप दुख का कारण है।

(३) रत्नकरण्ड श्रावकाचार गा० ३३ मे "ससार परिभ्रमण ही बताया है।

प्रश्न ३३—मोक्षमार्ग अर्थात् मोक्ष का रास्ता क्या है ?

उत्तर—अपने परम पारिणामिक ज्ञायक भगवान का आश्रय लेने से जो सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति, वह मोक्ष का रास्ता है।

प्रश्न ३४—सम्यग्दर्शनादि मोक्षमार्ग है इसमें अनेकान्त क्या है ?

उत्तर—सम्यग्दर्शादि ही मोक्षमार्ग है व्यवहार रत्नत्रयादि मोक्षमार्ग नही है यह अनेकान्त है।

प्रश्न ३५—व्यवहार मोक्षमार्ग नही है, यह किस जीव की बात है ?

उत्तर—जिस जीव को सम्यग्दर्शनादि प्रगट हुआ है उसको जो भूमिकानुसार राग होता है वह राग मोक्षमार्ग नही है। जो शुध्दि प्रगटी है वह ही मोक्षमार्ग हैं। मिथ्यादृष्टि के शुभभावो को तो व्यवहार भी नही कहा जाता है। क्योकि अनुपचार हुए बिना उपचार का आरोप नही आता है।

प्रश्न ३६—द्रव्य पुण्य पाप और शुभाशुभ भावो के सम्बन्ध मे क्या २ जानना चाहिए ?

उत्तर (१) परमार्थत (वास्तव में) पुण्य पाप (शुभाशुभभाव) आत्मा को अहितकर ही है और यह आत्मा की क्षणिक अशुध्द अवस्था है।

(२) सम्यग्दृष्टि के शुभ भावों से संवर निर्जरा होती है यह मान्यता खोटी है क्योंकि शुभभाव चाहे ज्ञानी के हो, या मिथ्यादृष्टि के हो दोनो ही बंध के कारण है [समयसार कलश टीका]
(३) पुण्य छोडकर, पाप रूप प्रवर्तन ना करे और पुण्य को मोक्षमार्ग ना माने, यह पुण्य पाप को जानने का लाभ है।

(४) द्रव्य पुण्य पाप आत्मा का हित अहित नही कर सकते हैं।

प्रश्न ३६—आस्रव की दूसरी परिभाषा क्या है ?

उत्तर—(१) नया नया आना (२) मर्यादा पूर्वक आना।

प्रश्न ३८—'भावआस्रव, में यह दोनो आस्रव की परिभाषा किस प्रकार घटती है ?

उत्तर—(१) शुभाशुभ नये नये आते हैं इसलिए "नया नया आना" यह भावआस्रव है। (२) जीव इतना विकार करे, जो ज्ञान दर्शन वीर्य का सर्वथा अभाव हो जावे, ऐसा नही हो सकता इसलिए आस्रवभाव मर्यादा में ही आता है अतः "मर्यादा पूर्वक आना" उसे भावआस्रव कहते हैं।

प्रश्न ३९—'द्रव्यआस्रव' मे यह दोनो आस्रव की परिभाषा किस प्रकार है ?

उत्तर—(१) कर्म नये नये आते हैं इसलिए "नया नया आना" यह द्रव्यआस्रव हैं (२) जीव विकार करे और सर्व कार्माणवर्गणा द्रव्यकर्मरूप परिणमन कर जावे, ऐसा नही होता है, क्योंकि कार्माण वर्गणा भी मर्यादा पूर्वक ही आती है इसलिए "मर्यादा पूर्वक आना" यह द्रव्यआस्रव है।

प्रश्न ४०—विकार पूर्ण किसे होता है ?

उत्तर—किसी को भी नही; क्योंकि यदि विकार पूर्ण हो जावे तो जीव के नाश का प्रसग उपस्थित हो जावेगा; सो ऐसा होता ही नही।

प्रश्न ४१—पचाध्यायीकार ने आस्रव को क्या कहा है ?

उत्तर—"आगन्तुक भाव" कहा है ।

प्रश्न ४२—मोक्ष कितने प्रकार का है ?

उत्तर—पाँच प्रकार का है । (१) शक्ति रूप मोक्ष (२) दृष्टि रूप मोक्ष (चौथा गुणस्थान), (३) मोहमुक्त मोक्ष (१२वाँ गुण स्थान) (४) जीवनमुक्त मोक्ष (१३, १४ वां गुणस्थान) (५) विदेह मुक्त मोक्ष (सिध्ददशा) ।

प्रश्न ४३—पाच प्रकार के मोक्ष के विषय मे क्या ध्यान रखना चाहिए ?

उत्तर—(१) शक्ति रूप मोक्ष के आश्रय के लिये बिना दृष्टिरूप मोक्ष की प्राप्ति नही होती है। (२) दृष्टिमोक्ष प्राप्त किये बिना मोह मुक्त मोक्ष की प्राप्ति नही होती है। (३) मोह मुक्त मोक्ष प्राप्त किये बिना जीवन मुक्त मोक्ष की प्राप्ति नही होती है। (४) जीवन मुक्त मोक्ष प्राप्त किये बिना विदेह मुक्त मोक्ष की प्राप्ति नही होती है। इसलिए पात्र जीवो को एक मात्र शक्ति रूप मोक्ष का आश्रय करना चाहिए क्योकि इसीके आश्रय से दृष्टिमोक्षआदि सब मोक्षो की प्राप्ति होती है। पर के, विकार के, अपूर्ण पूर्ण शुध्द पर्यायो के आश्रय से कुछ भी प्राप्ति नही होती है परन्तु अधर्म की प्राप्ति होती है।

प्रश्न ४४— ससार का बीज है ?

उत्तर—पर वस्तुओ मे, और शुभाशुभभाव मे एकत्व बुद्धि ही ससार का बीज है। [पुरषार्थसिध्दि उपाय गा० १४]

प्रश्न ४५—पचाध्यायी में ससार का बीज अर्थात् मिथ्यात्व किसे किसे बताया है ?

उत्तर—(१) जो आत्मा कर्मचेतना (राग द्वेष मोहरूप) और कर्मफल

चेतना (सुख दुख रूप) बस मेरा आत्मा इतना ही है ऐसा अनुभव करना वह मिथ्यादर्शन है। [गा० ६७४ से ६७२]

(२) आत्मा को नौ तत्त्वरूप (पर्याय के भेद रूप) अनुभव करना और सामान्यरूप (अ.त तत्त्वरूप) अनुभव नहीं करना यह मिथ्य दर्शन है। [गा० ६८३ से ६६६]

(३) [१] आत्मा का, [२] कर्म का, [३] कर्ता भोक्तापने का, [४] पाप का, [५] पुण्य पाप के कारण का [६] पुण्य पाप के फल का, [७] सामान्य विशेष स्वरूप का, [८] राग से भिन्न अपने स्वरूप का, आस्तिक्य का श्रद्धानज्ञान ना होना वह मिथ्यादर्शन है। [गा० १२३३]

(४) सातभय युक्त रहना वह मिथ्यादर्शन है। [गा० १२६४]

(५) इष्ट का नाश न हो जाय, अनिष्ट की प्राप्ति न हो जावे, यह धन नाश होकर दरिद्रता न आजावे यह इसलोक का भय है, यह मिथ्यादर्शन है। विश्व से भिन्न होने पर भी अपने को विश्वरूप समझना, यह मिथ्यादर्शन है। [गा० १२७४ से १२७८]

(६) मेरा जन्म दुर्गति मे न हो जाये ऐसा परलोक का भय यह मिथ्यादर्शन है। [गा० १२८४ से १२६१ तक]

(७) रोग मे डरते रहना, या रोग आने पर घबराना, या उससे (रोग से) अपनी हानि मानना यह वेदना भय मिथ्यादर्शन से होता है। [गा० १२६२ से १२६४ तक]

(८) शरीर के नाश से अपना नाश मानना यह अत्राणभय (वेदनाभय) मिथ्यादृष्टियों को होता है। [गा० १२६६ से १३०१]

(६) शरीर की पर्याय के जन्म मे अपना जन्म और शरीर की पर्याय के नाश से अपना नाश मानना यह अगुप्तिभय मिथ्यादर्शन से होता हैं। [१३०४ से १३०५]

(१०) दश प्राणो के नाश से डरना या उनके नाश से अपना

नाश मानना, यह मरणभय मिथ्यादर्शन से होता है।

[१३०७ से १३०८]

(११) बिजली गिरने से, या और किसी कारण से, मेरी बुरी अवस्था ना हो जाय ऐसा अकस्मात्भय मिथ्यादर्शन से होता है। [गा० १३११ से १३१३]

(१२) लोकमूढता, देवमूढता, गुरुमूढता और धर्ममूढता यह मिथ्यादर्शन के चिन्ह हैं। [गा० १३६१ से १३६६]

(१३) नौ तत्वों में अश्रध्दा अर्थात् विपरीत श्रध्दा का होना यह मिथ्यादर्शन है। [गा० १७६२ से १८०६]

(१४) अन्य मतियो के बताये हुए पदार्थो मे श्रध्दा का होना यह मिथ्यादर्शन है। [गा० १७६७]

(१५) आत्मस्वरूप की अनुपलब्धि होना, यह मिथ्य दर्शन है।

(१६) सूक्ष्म अन्तरित और दूसवर्ती पदार्थो का विश्वास ना होना यह मिथ्यादर्शन है। जैसे (१) जो पदार्थ केवलो गम्य हैं, वह छदमस्थ को आगम आधार से जानने योग्य है।

(२)—धर्म अधर्म आकाश काल परमाणु आदि को सूक्ष्म पदार्थ कहते हैं क्योकि यह इन्द्रियों से ग्रहण नही होते हैं।

(३)—राम रावण आदि को अर्थात् जिन पदार्थो मे भूतकाल के बहुत समय का अन्तर हो—या आगे बहुत समयबाद होने वाला हो। राजा श्रेणिक प्रथम तीर्थकर होंगे, तथा दूरवर्ती पदार्थों मे मेरुपर्वत, स्वर्ग, नदी, द्वीप, समुद्र इत्यादिक जिनका छदमस्थ वहाँ पहुचकर उनका दर्शन नही कर सकता है। मिथ्या दृष्टि इनका विश्वास नही करता है यह मिथ्यादर्शन हैं।

[गा० १८१०]

(१७) मोक्ष के अस्तित्व का और उसमें पाये जाने वाले

अतिन्द्रिय सुख और अतिन्द्रिय ज्ञान के प्रति रुचि ना होना यह मिथ्यादर्शन है। [गा० १८१२]

(१८ जाति अपेक्षा छह द्रव्यो का स्वत.सिध्द, अनादिअनन्त स्वतंत्र परिणमन न मानना यह मिथ्यादर्शन है। [गा० १८१३]

(१९, प्रत्येक द्रव्य को नित्य-अनित्य, एक-अनेक, अस्ति-नास्ति तत्-अतत् स्वरूप आदि वस्तु अनेकान्तात्मक है ऐसा न मानना किन्तु एकान्तरूप मानना यह मिथ्यादर्शन है। [गा० १८१४]

(२०) नोकर्म (शरीर मन वाणी), भावकर्म (क्रोधादिशुभाशुभ-भाव) और धन धान्यादि जो अनात्मीय वस्तुए है उनको आत्मीय मानना यह मिथ्यादर्शन है।

(२१) झूठे देव गुरु धर्म को सच्चेवत् समझना अर्थात सच्चे देव गुरुधर्म की श्रध्दा न होना यह मिथ्यादर्शन है। [गा० ८१६]

(२२) धन, धान्य, सुता आदि की प्राप्ति के लिए देवी आदि को पूजना या अनेक कुकर्म करना यह मिथ्यादर्शन है [१८१७]

प्रश्न ४६—आपने मिथ्यात्व के जो २२ लक्षण बताये हैं यह तो पचाध्यायी के ही बताये है क्या और किसी शास्त्र मे नहीं है?

उत्तर—भाई सब शास्त्रो मे यही लक्षण बताये है।

प्रश्न ४७—श्री प्रवचनसारजी म मिथ्यात्व का क्या लक्षण बताया है?

उत्तर—(१) I पदार्थों का अयथा ग्रहण, II तिर्यंच मनुष्यो के प्रति करुणाभाव, III विषयो की सगति अर्थात् इष्ट विषयों मे प्रीति और अनिष्ट विषयो मे अप्रीति, यह सब मोह के चिन्ह (लक्षण) हैं। [गा० ८५]

(२) I जीव के द्रव्य गुण पर्याय सम्बन्धी मूढभाव, वह मोह भाव है। II उससे आच्छादित वर्तता हुआ जीव राग द्वेष को

प्राप्त करके क्षुब्ध होता है। [गा० ८३]

(३) जो श्रमण अवस्था मे इन अस्तित्व वाले, विशेष सहित पदार्थों की श्रध्दा नही करता वह श्रमण नही है उसे धर्म प्राप्त नहीं होता हैं। [गा० ९१]

(४) आगमहीन श्रमण निज और पर को नही जानता, वह जोवादि पदार्थो को नहीं जानता हुआ भिक्षु, द्रव्य-भाव कर्मों को कैसे क्षय करे? [गा० २३३]

(५) द्रव्यलिंगी मुनि को ससार तत्त्व कहा है। [गा० २७१]

(६) सूत्र सयम और तप से सयुक्त होने पर भी (वह जीव) जिनोक्त आत्म प्रधान पदार्थों को श्रध्दान नही करता तो वह श्रमण नही है। [गा० २६४]

(७) असमान जातीय द्रव्य पर्याय मे एकत्वबुध्दि यह मिथ्यादर्शन है। [गा० ९४]

प्रश्न ४८— क्या मिथ्यादर्शन का स्वरूप श्री समयसार जी मे भी आया है?

उत्तर—(१) द्रव्यकर्म, नोकर्म और भावकर्म मे एकत्वबुध्दि मिथ्यादर्शन है। [गा० १९]

(२) जबतक यह आत्मा प्रकृति के निमित्त से उपजना-विनशना नही छोडता है तब तक अज्ञानी है, मिथ्यादृष्टि है, असयत है। [गा० ३१४]

(३) [१] शुभाशुभभावो में और ज्ञप्ति क्रिया मे (२) देव नारकी आदि और ज्ञायक आत्मा मे (३) ज्ञेय और ज्ञान मे, एकत्व बुध्दि मिथ्यादर्शन है, एकत्व का ज्ञान मिथ्याज्ञान है और एकत्व का आचरण मिथ्या चारित्र है। [गा० २७०]

(४) जो बहुत प्रकार के मुनिलिगो मे अथवा गृहस्थी लिगो मे

ममता करते है अर्थात् यह मानते है कि द्रव्यलिंग ही मोक्ष का दाता है उन्होने समयसार को नही जाना। उसे [१] 'अनादिरुढ' [२] 'व्यवहार मे मूढ' [३] और 'निश्चय पर अनारुढ' कहा है यह सब मिथ्यात्व का प्रभाव है। [गा० ४१३]

प्रश्न ४६—छह ढाला मे अगृहीत मिथ्यादर्शन किसे कहा है ?

उत्तर—(१) आत्मा का स्वभाव ज्ञानदर्शन है इसको भूलकर शरीर आदि की पर्याय को आत्मा की मानलेना, शरीर आश्रित उपवास आदि और उपदेशादि मे अपनेपने की बुध्दि होना यह अगृहीत मिथ्यादर्शन है।

(२) शरीर की उत्पत्ति मैं अपनी उत्पत्ति और शरीर के बिछुडने पर अपना मरण मानना अगृहीत मिथ्यादर्शन है।

(३) शुभाशुभभाव प्रगट दुख देने वाले हैं उन्हे सुखकर मानना अगृहीत मिथ्यादर्शन है।

(४) शुभाशुभभाव एक रूप ही है, बध रूप ही है और बूरे ही हैं परन्तु अपने आप का अनुभव ना होने से अशुभ कर्मों के फल मे द्वेष और शुभकर्मों के फल में राग करना यह अगृहीत मिथ्यादर्शन है।

(५) निश्चय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र जीव को हितकारी है, स्वरूप स्थिरता द्वारा राग का जितना अभाव वह वैराग्य है, और सुख का कारण हैं निश्चय सम्यग्दर्शनादि को कष्टदायक मानना यह अगृहीत मिथ्यादर्शन है।

(६) सम्यग्ज्ञानपूर्वक इच्छाओ का अभाव ही निजरा है और वही आनन्दरूप हैं परन्तु अपनी शक्ति को भूलकर इच्छाओ की पूर्ति मे सुख मानना अगृहीत मिथ्यादर्शन है।

(७) मुक्ति मे पूर्ण निराकुलता रूप सच्चा सुख है उसके बदले

भोग सम्बन्धी सुख को ही सुख मानना यह अगृहीत मिथ्या-दर्शन है।

प्रश्न ५०—अगृहीत मिथ्यात्व क्या क्या है स्पष्ट खुलासा कीजिये ?

उत्तर (१) पर द्रव्य में अहं बुध्दिरूप, यह मिथ्यात्व भाव है।

(२) पर गुण मे अहं बुध्दि रूप यह मिथ्यात्व भाव है।

(३)पर पर्यायो मे अहं बुध्दि रूप, यह मिथ्यात्व भाव है।

(४) पर द्रव्य मे ममकार बुध्दि रूप, यह मिथ्यात्व भाव है।

(५) पर गुण मे ममकार बुध्दि रूप, यह मिथ्यात्व भाव है।

(६) पर पर्याय मे ममकार बुध्दि रूप, यह मिथ्यात्व भाव हैं।

(७) दृष्टिगोचर पुद्गल पर्यायो में द्रव्य बुध्दि रूप, यह मिथ्यात्व भाव हैं।

(८) अदृष्टिगोचर द्रव्य गुण पर्यायो मे अभाव बुध्दिरूप, यह मिथ्यात्वभाव है। यह सब अगृहीत मिथ्यात्व हैं।

प्रश्न ५१ पर द्रव्य मे अहं बुध्दि रूप मिथ्यात्व भाव क्या है ?

उत्तर—पर द्रव्य जो शरीर पुद्गल पिण्ड, उसमे जो अहंबुध्दि 'यह मैं हूं' यह पर द्रव्य मे अहं बुध्दिरूप मिथ्यात्व भाव है।

प्रश्न ५२ पर गुण मे अहं बुध्दि रूप मिथ्यात्व भाव क्या है ?

उत्तर—पुद्गल के स्पर्शादिगुण उनमे अहं बुध्दि होना। जसे—मैं गरम मैं ठण्डा, मैं कोमल, मैं कठोर, मैं हलका, मैं भारी, मैं रूखा, मैं चिकना, मैं खट्टा, मैं मीठा मैं कड़ुवा, मैं चरपरा, मैं कषायला, मैं दुर्गंधीवाला, मैं सुगधीवाला मैं काला, मैं गोरा, मैं लाल, मैं हरा, मैं पीला इत्यादि यह पर गुणो में अहं बुध्दि रूप मिथ्यात्व भाव है।

प्रश्न ५३—पर पर्यायो में अहं बुध्दि रूप मिथ्यात्व भाव क्या है ?

उत्तर—मैं देव, मैं नारकी, मैं मनुष्य, मैं तिर्यंच, और इनके एकेन्द्रिय

आदि अवान्तर भेद-प्रभेद में अहं होना, यह पर पर्यायों मे अहबुध्दि रूप मिथ्यात्वभाव है।

प्रश्न ५४—पर द्रव्य मे ममकार बुद्धि रूप मिथ्यात्वभाव क्या है?

उत्तर—मेरा धन, यह मेरा मकान, यह मेरे आभूषण, यह मेरे कपड़े, यह मेरा बक्सा, यह मेरा पलग, यह मेरा बाग, यह मेरी घडी, यह मेरे दश हजार के नोट, यह मेरा पुस्तकालय, यह मेरा भोजन इत्यादि वस्तुओ में ममकारपना, यह पर द्रव्यो मे ममकार बुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्रश्न ५५—पर गुण में ममकार बुद्धिरूप मिथ्यात्व भाव क्या है?

उत्तर—शरीर के बल वीर्य को ऐसा मानना कि यह मेरा बल ऐसा है कि अनेक पराक्रम करू, यह मेरा शब्द, यह मेरी चाल, यह मेरी उगलिया, यह मेरा मुह, यह मेरा नाक, यह मेरा कान, यह मेरे दान्त इत्यादि अनेक कार्यों में प्रवृत्ति होना, यह पर गुणो में ममकार बुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्रश्न ५६—पर पर्याय में ममकार बुद्धिरूप मिथ्यात्व भाव क्या है?

उत्तर—यह मेरे पुत्र, यह मेरी स्त्री, यह मेरी माता, यह मेरे पिता, यह मेरे भाई, यह मेरी बहिन, यह मेरे नौकर यह मेरी प्रजा, यह मेरे हाथी, यह मेरे घोडे, यह मेरी गाय भैंस इत्यादि में ममकार बुद्धि होना, यह पर पर्याय मे ममकार बुद्धिरूप मिथ्यात्व भाव है।

* प्रश्न ५७—द्रष्टि गोचर पुद्गल पर्यायों में द्रव्य बुध्दि रूप मिथ्यात्व भाव क्या है।

उत्तर—दृष्टि मे जितनी पुद्गल की पर्याय आती हैं; उनको जुदा २ द्रव्य मानता है। ये घट हैं। यह स्वर्ण है। यह पाषाण है। ये पर्वत है। ये वृक्ष हैं। यह मनुष्य है। यह हाथी है। यह घोडा है। यह चिडिया है। यह स्याल है। यह सिंह है। यह सूर्य है।

यह चन्द्रमा है। यह लडका है। यह लडकी हैं। यह जयपुर नरेश है। यह राष्टपति हैं। यह बहू हैं। इत्यादि समानजातीय और असमानजातीय द्रव्य पर्यायो मे द्रव्यबुद्धि को धारण करता है। उनका पृथक पृथक सत्त्व मानता है। अर्थात् वर्तमान क्षणिक पर्यायों को ही द्रव्य मानता है। त्रैकालिक सत्ता सहित गुण पर्याय रूप. द्रव्य नही मानता हैं यह दृष्टि गोचर पुद्गल पर्यायों में द्रव्य बुद्धिरूप मिथ्यात्व भाव हैं।

प्रश्न ५८—अदृष्टिगोचर द्रव्य गुण पर्यायों में अभावबुद्धिरूप मिथ्यात्व क्या हैं ?

उत्तर—[१] जो दृष्टि गोचर नही ऐसे जो दूर क्षेत्रवर्ती, [२] होकर नाश होगई, [३] अनागत में होगी [४] इन्द्रियों से अगोचर सूक्ष्म पर्याय इत्यादिक जो अपना और पर का है। उनको अभाव रूप मानता है। इनका सत्व हो चुका, होवेगा, या वर्तमान मे हैं ऐसा नही मानता है इत्यादि सब मिथ्यात्व भाव है।

प्रश्न ५८—आपने जो ८ प्रकार का मिथ्यात्व भाव बताया है यह कैसा मिथ्यात्व है और क्यो है ?

उत्तर यह अगृहीत मिथ्यात्व हैं। बिना सिखाये अनादि से एक एक समय करके चला आ रहा है। परभाव योग्य सर्व पर्याय, सदाकाल सर्व क्षेत्र में, मिथ्यादृष्टियो के प्रवर्तता है। किसी के द्वारा कदाचित् उपदेशित नही, इस वास्ते इसे अगृहीतमिथ्यात्व कहा है।

प्रश्न ६०—गृहीत मिथ्यात्व भाव क्या है ?

उत्तर—(१) देव, (२) गुरु, (३) धर्म, (४) आप्त, (५) आगम, (६) पदार्थ इनका उलटा श्रद्धान यह गृहीत मिथ्यात्व है।

प्रश्न ६१—जीव का प्रयोजन क्या है ?

उत्तर—दुख का अभाव और सुख की प्राप्ति, यह ही एक मात्र प्रयोजन है।

प्रश्न ६२—दुख का अभाव और सुख की प्राप्ति के लिए निमित्त कारण किसको माने, तो कल्याण का अवकाश है ?

उत्तर—(१) देव, गुरु, धर्म, आप्त, आगम और पदार्थ की आज्ञानुसार प्रवंतन करे तो कल्याण का अवकाश है।

प्रश्न ६३—देव किसे कहते है ?

उत्तर—(१) निज स्वभाव के साधन द्वारा अनन्तचतुष्टय प्राप्त किया है और १८ दोष जिसमें नहीं हैं और जिनने वचन से धर्म तीर्थ की प्रवृत्ति होती है जिससे अनेक पात्र जीवो का कल्याण होता है। जिनको अपने हित के अर्थी श्री गणधर इन्द्रादिक उत्तम जोव उनका सेवन करते हैं इस प्रकार अरहत और सिद्ध देव है। इसलिए ऐसे देव की आज्ञानुसार प्रवर्तन करने से धम की प्राप्ति, वृद्धि और पूर्णता होती है अत. इन्ही देव को मानना चाहिए। आयुध अम्बरादि वा अंग विकारादि जो काम क्रोधादि निंद्य भावों के चिन्ह हैं ऐसे कुदेवों को नही मानना चाहिए।

प्रश्न ६४—गुरु किसे कहते हैं ?

उत्तर—जो विरागी होकर समस्त परिग्रह को छोडकर शुद्धोपयोगरूप परिणमित हुए है ऐसे आचार्य उपाध्याय और सर्व साधु गुरु है बाकी सब गुरु नही है इसलिए ऐसे गुरु को ही मानना चाहिए, औरों को नही।

श्न ६५—धर्म किसे कहते है ?

उत्तर—(१) निश्चयधर्म तो वस्तुस्वभाव है। (२) रागद्वेष रहित अपने ज्ञाता दृष्टा स्वभाव में स्थिर होना वह निश्चय

धर्म है अर्थात् चारो गतियो के अभाव रूप अविनाशी मोक्ष सुख को प्राप्त करावे वह धर्म है। (३) पूर्णधर्म ना होने पर मोक्षमार्ग अर्थात् सवर निर्जरा रूप धर्म होता है उसमे निश्चय व्यवहार का जैसा स्वरूप है वैसा समझना चाहिए। इससे विरुद्धजो पर से, विकार से धर्म बताये उससे बचना चाहिए।

प्रश्न ६६—आप्त किसे कहते हैं ?

उत्तर—जीव का परमहित मोक्ष है उसके उपदेष्टा वह आप्त है आप्त दो प्रकार के हैं एक मूल आप्त अरहत देव है। उत्तर आप्त गणधरादिक, मुनि, श्रावक और सम्यग्दृष्टि भी उत्तर आप्त में आते है क्योंकि वह भी उन्ही के अनुसार वीतराग, सर्वज्ञ और हित का उपदेश देते है इसलिए पात्र जीवो को ज्ञानीयों का सत्सग करना चाहिए, अज्ञानीयो का नही।

प्रश्न ६७—आगम किसे कहते है ?

उत्तर—आगम अर्थात् दिव्यध्वनी जिनवाणी हैं जो परम्परा या साक्षात् एक वीतरागभाव का पोषण करे वह आगम है क्योकि आगम का तात्पर्य दुख का अभाव, सुख की प्राप्ति है। अब कलि-काल के दोष से कषायी पुरषो द्वारा शास्त्रो में अन्यथा अर्थ का मेल होगया है इसलिए जैन न्याय के शास्त्रो की ऐसी आज्ञा है कि (१) आगम का सेवन (२) युक्ति का अवलम्बन (३) परम्परा गुरु का उपदेश (४) स्वानुभव, इन चार विशेषो का आश्रय करके अर्थ की सिध्दि करके ग्रहण करना, क्योकि अन्यथा अर्थ-के ग्रहण होने से जीव का बुरा होता है।

प्रश्न ६८—पदार्थ किसे कहते हैं ?

उत्तर—पद का अर्थ = अर्थात् प्रयोजन, उसको पदार्थ कहते हैं। नौ प्रकार के पदार्थों का स्वरूप जैसा जिनागम में कहा हैं वैसे ही स्वरूप सहित ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि यह प्रयोजनभूत

पदार्थ है। जैसा स्वरूप कहा है उस ही स्वरूप करि ग्रहण करना मोक्ष का कारण है। अन्यथा स्वरूप का ग्रहण करने से ससार परिभ्रमण होता है।

प्रश्न ६९—आपने देव, गुरु धर्म, आप्त, आगम और पदार्थों को मोक्ष के कारण (निमित्त) बताये है, यह क्यो बताते हैं ?

उत्तर—इन छह निमित्तो मे से एक की भी हानि हो जावे तो, मोक्ष-मार्ग की हानि हो जाती है क्योकि —

(१) देव न होय, तो धर्म किसके आश्रय प्रवर्ते।

(२) गुरु न होय तो धर्म का ग्रहण कौन करावे।

(३) धर्म को ग्रहण न करे तो मोक्ष की सिध्दि किसके द्वारा की जाय।

(४) आप्त का ग्रहण ना होय तो सत्य धर्म का उपदेश कौन दे।

(५) आगम का ग्रहण ना होय तो मोक्षमार्ग में अवलम्बन किसका करे।

(३) पदार्थो का ज्ञान ना कीजिये तो [१] आप का और पर का, (२) अपने भावो का और पर भावों का, [३] हेय भावों का और उपादेय भावों का, (४) अहित का और अपने परमहित का कैसे ठीक होवे। इसलिए इन छह निमित्तो का मोक्षमार्ग में अवश्य ग्रहण होता है।

प्रश्न ७०—इन छह निमित्तो को गृहीत मिथ्यात्व क्यों कहा है ?

उत्तर—इन छह निमित्तों को गृहीत मिथ्यात्व नहीं कहा है परन्तु इनके उल्टेपने के श्रद्धान को गृहीतमिथ्यात्व कहा है। उल्टे निमित्तो के मानने से जीव का बहुत बुरा होता है।

प्रश्न ७१—आपने छह निमित्तों के अन्यथा रूप प्रवृत्ति को गृहीत-मिथ्यात्व कहा है परन्तु शास्त्रों में (१) एकान्त (२) विनय

(३) संशय, (४) विपरीत, (५) अज्ञान को गृहीतमिथ्यात्व कहा है, वह क्यो कहा है ?

उत्तर—गृहीत मिथ्यात्व के ५ प्रकार प्रवर्त्ता है इसलिए प्रवर्त्ता की अपेक्षा गृहीत मिथ्यात्व के मूलभेद पांच प्रकार किये हैं। उत्तर भेद असख्यात लोक प्रमाण है।

प्रश्न ७२—स्व क्या है और पर क्या ?

उत्तर—(१) अमूर्तिक प्रदेशों का पुंज, प्रसिध्द ज्ञानादि गुणो का धारी, अनादिनिधन, वस्तु स्व है।

(२) मूर्तिक पुद्गल द्रव्यो का पिण्ड, प्रसिध्द ज्ञानादि गुणों से रहित, नवीन ही जिसका सयोग हुआ है ऐसे शरीरादिक पुद्गल, पर है जैसा स्व का स्वरूप है वैसा माने तो तुरन्त धर्म की प्राप्ति होती है परन्तु अज्ञानी अनादि से पर को स्व मानता है और स्व को पर मानता है, इसलिए चारो गतियो मे घूमता है। अब पात्र जीव को अपने स्व को स्व, और पर को पर जानकर मोक्ष रूपी लक्ष्मी का नाथ बनना चाहिए।

प्रश्न ७३—आपने इतने विस्तार से गृहीत मिथ्यात्व और अगृह मिथ्यात्व का स्वरूप क्यो समझाया है ?

उत्तर—ऊपर कहे गये अनुसार मिथ्यात्व का स्वरूप जानकर सब जीवो को गृहीत मिथ्यात्व तथा अगृहीत मिथ्यात्व छोड़ना चाहिए, क्योंकि सब प्रकार के बध का मूल कारण मिथ्यात्व है। मिथ्यात्व को नष्ट किये बिना अविरति, प्रमाद, कषाय आदि कभी दूर नही होते, इसलिए सबसे पहले मिथ्यात्व को दूर करना चाहिए।

प्रश्न ७४—मिथ्यात्व को सबसे पहले क्यो दूर करना चाहिए ?

उत्तर—मिथ्यात्व सप्त व्यसनो से भी बढ़कर भयकर महापाप हैं; इसलिए जैनधर्म सर्वप्रथम मिथ्यात्व को छोड़ने का उपदेश

देता है।

प्रश्न ७५—आचार्यकल्प प० टोडरमल जी ने मिथ्यात्व के लिए क्या कहा है ?

उत्तर—हे भव्यो ! किंचित् मात्र लोभ से व भय से कुदेवादिक का सेवन करके, जिससे अनन्त काल पर्यन्त महादुःख सहना होता है ऐसे मिथ्यात्वभाव का करना योग्य नही है। जिन धर्म में तो यह आम्नाय है कि पहले बडा पाप छुड़ाकर फिर छोटा पाप छुडाया है, इसलिए इस मिथ्यात्व को सप्तव्यसनादिक से भी बड़ा पाप जानकर पहले छुडाया हैं। इसलिए जो पाप के फल से डरते है, अपने आत्मा को दुख समुद्र में डुबाना नही चाहते, वे जीव इस मिथ्यात्व को अवश्य छोडो।

प्रश्न ७६—जो जीव इन मिथ्यात्वो के प्रकारो का जानकर दूसरे का दोष देखते हैं, अपना नही देखते, उसके लिए आचार्यकल्प प० टोडरमल जी ने क्या कहा है ?

उत्तर—"मिथ्यात्व के प्रकारो को पहिचानकर अपने में ऐसा दोष हो तो उसे दूर करके सम्यक् श्रध्दानी होना, औरो के ही ऐसे दोष देख-देखकर कषायी नही होना, क्योकि अपना भला-बुरा तो अपने परिणामो से है। औरो को तो रुचिवान देखें तो कुछ उपदेश देकर उनका भी भला करें। इसलिए अपने परिणाम सुधारने का उपाय करना योग्य है, सब प्रकार के मिथ्यात्व भाव छोडकर सम्यग्दृष्टि होना योग्य है, क्योकि संसार का मूल मिथ्यात्व हैं और मोक्ष का मूल सम्यक्त्व है और मिथ्यात्व के समान अन्य पाप नही है। इसलिए जिस-तिस उपाय से सर्व प्रकार मिथ्यात्व का नाश करना योग्य है।

प्रश्न ७७—मोक्ष के प्रयत्न में कितनी बाते एक साथ होती है, और कौन कौन सी होतीं हैं ?

उत्तर—मोक्ष के प्रयत्न में पाच वाते एक साथ होती है। (१) ज्ञायक स्वभाव (२) पुरषार्थ (३) काललब्धि (४) भवितव्य और (५) कर्म के उपशमादि। यह ५ बातें धर्म करनेवाले को एक साथ होती है।

प्रश्न ७८—यह स्वभाव आदि पाँच बाते कारण है या कार्य है ?

उत्तर—कारण है, कार्य नही हैं।

प्रश्न ७९—स्वभाव क्या है ?

उत्तर--अनन्त गुणो का अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान आत्मा अपना स्वभाव हैं।

प्रश्न ८०—पुरषार्थ क्या है ?

उत्तर—अपने ज्ञान गुण की पर्याय जो पर सन्मुख है उसे अपने स्वभाव के सन्मुख करना यह पुरषार्थ है यह क्षणिक उपादान है।

प्रश्न ८१--काललब्धि क्या है ?

उत्तर—(१) वह कोई वस्तु नही, किन्तु जिस काल में कार्य बने वही काललब्धि है।

(२) यहा कालादि लब्धि मे काललब्धि का अर्थ स्वकाल की प्राप्ति होती है।

(३) भगवान श्री जयसेनाचार्य ने समयसार गा० ७१ में काललब्धि को धर्मपाने के समय "श्री धर्मकाललब्धि के नाम से सम्बोधन किया है।

प्रश्न ८२—भवितव्य क्या है ?

उत्तर—(१) भवितव्य अथवा नियति, उस समय की योग्यता है।

यह भी क्षणिक उपादान है।

(२) जो कार्य होना था, वो हुआ, इसको भवितव्य कहते हैं।

प्रश्न ८३—कर्म के उपशमादि क्या है ?

उत्तर– पुद्गल द्रव्य की अवस्था है।

प्रश्न ८४—कर्म के उपशमादिक का कर्ता कौन है, और कौन नहीं है ?

उत्तर—कर्म के उपशमादिक तो पुदग्ल की पर्यायें हैं, उनका कर्ता कार्माणवर्गणा है, जीव और अन्य वर्गणा इनका कर्ता नहीं है।

प्रश्न ८५—कर्म के उपशमादिक का और आत्मा का कैसा सबन्ध है ?

उत्तर - जब आत्मा यथार्थ पुरषार्थ करता है तब कर्म के उपशमादिक स्वय स्वन हो जाते हैं। इनका स्वतन्त्र रूप से निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है जो स्वतन्त्रता का सूचक है, परतन्त्रता का नहीं है

प्रश्न ८६—इन पाच कारणो में से किसके द्वारा मोक्ष का उपाय बनता है ?

उत्तर—जब जीव अपने ज्ञायक स्वभाव के सन्मुख होकर यथार्थ पुरषार्थ करता है तब काललब्धि, भवितव्य और कर्म के उपशमादिक स्वयमेव हो जाते है।

प्रश्न ८७—'समवाय' किसे कहते है ?

उत्तर—मिलाप, समूह को समवाय कहते है।

प्रश्न ८८—मोक्ष में किसकी मुख्यता है ?

उत्तर—पुरषार्थ की मुख्यता है।

प्रश्न ८९—जीव का कर्तव्य क्या है ?

उत्तर—जीव का कर्तव्य तो तत्त्वनिर्णय का अभ्यास (अपने स्वभाव का आश्रय) ही है। वह करे तब दर्शनमोहका उपशम स्वयमेव होता है, किन्तु द्रव्यकर्म में जीव का कुछ भी कर्तव्य नहीं है।

प्रश्न ६०—मोक्ष के उपाय के लिए क्या करना चाहिए ?

उत्तर—जिनेश्वर देव के उपदेशानुसार पुरषार्थ पूर्वक उपाय करना चाहिए। इसमे निमित्त और उपादान दोनो आ जाते हैं।

प्रश्न ६१—जिनेश्वर देवने मोक्ष के लिए क्या उपाय बताया है ?

उत्तर— जो जीव पुरषार्थ पूर्वक मोक्ष का उपाय करता है उसे तो सर्व कारण मिलते हैं और अवश्य मोक्ष की प्राप्ति होतो है। काललब्धि, भवितव्य, कर्म के उपशमादिक कारण मिलाना नही पडते, किन्तु जो जीव पुरषार्थ पूर्वक मोक्ष का उपाय करता है, उसे तो सब कारण मिल जाते हैं। और जो उपाय नही करता, उसे कोई कारण नही मिलते और ना उसे धर्म की प्राप्ति होती है। ऐसा निश्चय करना।

प्रश्न ६२—क्या जीव को काललब्धि, भवितव्य, और कर्म के उपशमादिक जुटाना नही पडते है ?

उत्तर—जुटाना नही पडते है, वास्तव में जब जीव स्वभाव सन्मुख यथार्थ पुरषार्थ करता है तब वे कारण स्वय होने हैं।

प्रश्न ६३—रागादिक कैसे दूर हो ?

उत्तर—जैसे—पुत्र का अर्थी विवाहादि का तो उद्यम करे और भवितव्य स्वयमेव हो तब पुत्र होगा, उसीप्रकार विभाव दूर करने का कारण तो बुध्दिपूर्वक तत्त्वविचारादि (रुची और लीनता) है और अबुध्दिपूर्वक मोहकर्म के उपशमादिक हैं। सो तत्त्व का अर्थी (सच्चा सुख पाने का अर्थी) तत्त्व विचारादिक का तो उद्यम करे और मोहकर्म के उपशमादिक स्वयमेव हो, तब रागादिक दूर होते हैं।

प्र० ६४—श्री समयसार नाटक में 'शिवमार्ग', किसे कहा है ?

उ०—स्वभाव आदि पाचो को सर्वांगी मानना शिवमार्ग हैं, और

किसी एक को ही मानना, यह पक्षपात होने से मिथ्यामार्ग है। ऐसा कहा है।

प्र० ९५—कोई कहे, काललब्धि पकेगी, तभी धर्म होगा, क्या यह मान्यता बराबर है ?

उ०—यह मान्यता खोटी है, क्योंकि ऐसी मान्यता वाले ने पाच समवायों को एक साथ नही माना, मात्र एक काललब्धि को ही माना, इसलिए वह एकान्त कालवादी गृहीत मिथ्यादृष्टि है।

प्र० ९६—जगत में सब भवितव्य के आधीन है, जब धर्म होना होगा तब होगा, क्या यह मान्यता बराबर है ?

उ०—बिल्कुल नही, क्योंकि इस मान्यता वाले नें पांच समवायों को एक साथ नही माना, मात्र एक भवितव्य को ही माना। इसलिए वह एकान्त नियतिवादी गृहीत मिथ्यादृष्टि है।

प्र० ९७—कोई अकेले मात्र द्रव्य कर्म को ही माने तो क्या ठीक है ?

उ०—मिथ्या है, क्योंकि इस मान्यता वाले नें पाच समवायों को एक साथ नही माना, मात्र एक द्रव्यकर्म के उपशमादिक को ही माना इसलिए वह एकान्त कर्मवादी गृहीत मिथ्यादृष्टि है।

प्र० ९८—कोई मात्र स्वभाव को ही माने क्या ठीक है ?

उ०—बिल्कुल नही, क्योंकि इस मान्यता वाले ने पाचों समवायो को एक साथ नही माना, मात्र स्वभाव को ही माना, इसलिए यह स्वभाव वादी गृहीत मिथ्यादृष्टि है। और वेदान्त की मान्यता वाला है।

प्र० ९९—कोई मात्र पुरुषार्थ पुरुषार्थ ही चिल्लाये और बाकी स्वभाव आदि को न माने तो क्या ठीक है ?

बिल्कुल गलत हैं, इस मान्यता वाले ने भी पांच समवायों को एक साथ नहीं माना, मात्र पुरुषार्थ को ही माना, इसलिए यह बौद्ध मतावलम्बि गृहीत मिथ्यादृष्टि है।

प्र० १००—पाचो समवायो मे-द्रव्य-गुण- पर्याय कौन कौन हैं ?

उ०— सामान्य ज्ञायक स्वभाव वह द्रव्य है और शेष चार पर्याय है।

प्र० १०१—कोई तत्त्वनिर्णय ना होने मे कर्म का ही दोष निकाले तो क्या ठीक है ?

उ०—तत्त्वनिर्णय न करने में कर्म का कोई दोष नहीं है, किन्तु जीव का ही दोष है। जो जीव कर्म का दोष निकालता है, वह अपना दोष होने पर भी कर्म पर दोष डालता है वह अनीति है। जो सर्वज्ञ भगवान की आज्ञा माने उसके ऐसी अनीति नही हो सकती है। जिसे धर्म करना अच्छा नही लगता, वही ऐसा झूठ बोलता है। जिसे मोक्ष सुख की सच्ची अभिलाषा हो, वह ऐसी झूठी युक्ति नही बनायेगा।

प्र० १०२—क्या करे तो सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर नियम से मोक्ष हो ?

उ०—(१) जीव का कर्तव्य तो तत्त्वज्ञान का अभ्यास ही है, और उसी से स्वयमेव दर्शनमोह का उपशम होता है। दर्शनमोह के उपशमादिक में जीव का कर्तव्य कुछ भी नही है

(२) तत्पश्चात् ज्यों ज्यो जीव स्वसन्मुखता द्वारा वीतरागता मे वृद्धि करता है त्यो-त्यो श्रावकदशा, मुनिदशा प्रगट होती है।

(३) उस दशा में भी जीव अपने ज्ञायक स्वभाव में रमणता रूप पुरुषार्थ द्वारा धर्म परिणति (श्रेणी) को बढाता है वहां परिणाम सर्वथा शुद्ध होने पर केवलज्ञान, केवलदर्शन और मोक्षदशा रूप सिद्ध पद प्राप्त करता है।

प्र० १०३—स्वभाव, पुरुषार्थ आदि पांचों समवाय किसमें लगते हैं ?

उ०—ससार में जितने भी कार्य हैं सब में यह पांचों समवाय एक साथ लगते है। लेकिन यहां पर मोक्ष की बात है।

प्र० १०४—ससार मे जो जो कार्य हम करते हैं क्या वह सब पुरुषार्थ

मे करते हैं ?

उ०—बिलकुल नही । क्योकि —

(१) धनादिक की प्राप्ति में आत्मा का वर्तमान पुरुषार्थ किंचित् मात्र भी कार्यकारी नही है।

(२) लौकिक ज्ञान की प्राप्ति मे भी वर्तमान पुरुषार्थ किंचित् मात्र कार्यकारी नही है।

प्र० १०५—हमने पैसा कमाने का भाव किया तभी तो पैसो की प्राप्ति हुई ना ?

उ०—अरे भाई बिल्कुल नही, क्योकि पैसा कमाने का भाव पापभाव है। पाप करे और पैसा मिले, ऐसा कभी भी नही हो सकता है।

प्र० १०६—आजकल जमाने मे झूठ ना बोले, चोरी ना करे तो भूखे मर जावे ?

उ० बिल्कुल नही, क्योकि झूठ और चोरी कारण हो और पैसा मिले यह कार्य, ऐसा कभी नही हो सकता है।

प्र० १०७—झूठ बोलकर चोरी करने से पैसा देखने में तो आता है ?

उ०—पहिले जन्म में कोई शुभभाव या अशुभभाव किया, तो उसके निमित्त-नैमित्तिक सम्बध की अपेक्षा साता असाता का सयोग देखने मे आता है उसमे (रुपया पैसा कमाने में) जीव का पुरूषार्थ किंचित मात्र भी कार्यकारी नही है ?

प्र० १०८—क्या लौकिक ज्ञान की प्राप्ति में भी वर्तमान पुरूषार्थ किंचित मात्र कार्यकारी नही है ?

०—बिल्कुल नही है, क्योकि, विचारो, मेंढक चीरा, तो ज्ञान बढा, क्या यह ठीक है ? आप कहेंगे ऐसा ही देखते हैं। तो भाई मेंढक चीरने से ज्ञान बढता हो तो सौ मेंढक चीरने से ज्यादा ज्ञान बढ़ना चाहिये, सो ऐसा होता नहीं है।

प्र० १०९—किसी के कम ज्ञान, किसी को ज्यादा ज्ञान, ऐसा क्यो देखने मे आता है ?

उ०—पूर्व भव में ज्ञान के विकास सम्बन्धी मद कषाय किया तो ज्ञानावर्णी का मन्द रस होने से ज्ञान का उघाड देखने मे आता है।

प्र० ११० – भावास्रव अमर्यादित हो तो क्या हो ?

उ०— जीव के अभाव का प्रसग उपस्थित होवेगा।

प्र० १११ भावास्रव मर्यादित है यह क्या सूचित करता है ?

उ०—जो मर्यादित हो, उसका अभाव हो सकता है ऐसा जानकर पात्र जीव स्वभाव का आश्रय लेकर भावास्रव का अभाव करके धर्म की शुरुआत करके क्रम से परमदशा को प्राप्त हो जाता है।

प्र० ११२—द्रव्यास्रव मर्यादित है या अमर्यादित है ?

उ०—मर्यादित है क्योकि यदि अमर्यादित हो तो सम्पूर्ण कार्माण-वर्गणा को द्रव्यकर्म रूप परिणमित होने का प्रसग उपस्थित होवेगा, सो ऐसा होता नही।

प्र० ११३—भाव सम्वर और भाव निर्जरा मे कितने समय का अन्तर है ?

उत्तर—दोनो का समय एक ही है, परन्तु शुद्धि प्रगटी इस अपेक्षा भाव सम्वर है और शुद्धि की वृद्धिहुई की अपेक्षा भाव निर्जरा है।

प्र० ११४— भावसम्वर और भावनिर्जरा होने पर भावमोक्ष होने कितना समय लगेगा ?

उ०—असख्यात समय ही लगेंगे, सख्यात् या अनन्तसयय नही

प्र० ११५—जिस समय सम्वर-निर्जरा प्रगटे, उसी समय मोक्ष प्रगट

हो तो हम सम्वर निर्जरा होना माने । कोई ऐसा कहे तो क्या नुक्सान है ?

उ० (१)—चौथा गुणस्थान और सिद्धदशा ही रहेगी । और पाचवे से चौदहवे गुणस्थान तक के अभाव का प्रसग उपस्थित होवेगा ।

(२) श्रावक, मुनि, श्रेणी अरहतपने का अभाव हो होवेगा ।

(३) गुणस्थानो मे क्रम के अभाव का प्रसग उपस्थित होवेगा ।

(४) कोई उपदेशक नही रहेगा क्योकि सम्यग्दर्शन मे सम्यग्ज्ञानी का ही उपदेश निमित्त होता हैं इस बात का भी अभाव हो जावेगा ।

प्र० ११६—सम्वर पूर्वक निर्जरा किसको होती है और किसको नही ?

उ०—(१) सम्यग्दर्शन होने पर ही सम्वर पूर्वक निजरा ज्ञानियो को ही होती हैं । मिथ्यादृष्टियो को नही ।

(२) अनिवृत्तिकरण और अपूर्वकरण में अकेली निर्जरा होता हैं सम्वर पूर्वक नही ।

प्र० ११७—क्या करे तो सम्वर, निर्जरा की प्राप्ति होकर मोक्ष हो और क्या करे तो निगोद की प्राप्ति हो ?

उ०—अपने सामान्य द्रव्य स्वभाव को देखने से अपने विशेष मे (पर्याय मे) सम्वर निर्जरा की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष होता है । और मात्र विशेष को देखने से आस्रव बन्ध की प्राप्ति होकर निगोद की प्राप्ति होती है ।

प्र० ११८—जो स्वभाव के आश्रय से पुरुषार्थ करता है उसका क्या फल है ?

उ० (१) पच परावर्तन का अभाव (२) मिथ्यात्व अविरति आदि पाच ससार के कारणो का अभाव (३) पचपरमेष्ठीयों में उसकी

गिनती होने लगती है। (४) पचमगति मोक्ष की प्राप्ति (५) पचम पारिणामिक भाव का महत्व आ जाता है। (६) आठ कर्मों का अभाव हो जाना है। (७) १४ गुणस्थान, १४ मार्गणा और १४ जीवसमास का अभाव होकर सिद्धदशा की प्राप्ति, होना, इसका फल है।

प्र० ११६—अज्ञानियों को प्रयत्न करने पर भी सम्यग्दर्शन की प्राप्ति क्यों नही होती हैं ?

उ०—अज्ञानी का उल्टा प्रयत्न होने से सम्यग्दर्शन की प्राप्ति नही होती है, क्योकि सम्यग्दर्शन आत्मा के आश्रय से श्रद्धा गुण मे से आता है। अज्ञानी ढ़ढता है दर्शनमोहनीय के उपशमादि में और देव गुरु शास्त्र मे।

प्र० १२०—अज्ञानियो को सुख की प्राप्ति क्यो नही होती है ?

उ०—आत्मा के आश्रय से सुख गुण मे से सुखदशा प्रगट होती है अज्ञानी पाँचो इन्द्रियो के विषयो मे मे सुख मानता है। इसलिए सुख की प्राप्ति नही होती है।

प्र० १२१—अज्ञानियो को सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति क्यो नही होती है ?

उ०—आत्मा के आश्रय से ज्ञानगुण मे से सम्यग्ज्ञान आता है। और अज्ञानी देव गुरू, शास्त्र के आश्रय से, ज्ञेयो के आश्रय से, ज्ञानावर्णी के क्षयोपशमादि से मानता है। इसलिए सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति नही होती है

प्र० १२२—अज्ञानी को सम्यक्चारित्र की प्राप्ति क्यो नही होती है ?

उ०—आत्मा के आश्रय से चारित्र गुण मे से सम्यकचारित्र की प्राप्ति होती है। अज्ञानी अणुव्रतादि, महाव्र तादि के आश्रय से, तथा बाहरी क्रियाओ से मानता है। इसलिए सम्यक्चारित्र की प्राप्ति नही होती हैं।

प्रश्न १२३—जिसे जानने से मोक्षमार्ग की प्रवृत्ति हो वैसा अवश्य जानने योग्य-प्रयोजन भूत क्या क्या है ?

उत्तर (१) हेय-उपादेय तत्वो की परीक्षा करना।

(२) जीवादि द्रव्य, साततत्त्व, स्व-पर को पहिचानना तथा देव-गुरु-धर्म को पहिचानना।

(३) त्यागने योग्य मिथ्यात्व—रागादिक, तथा ग्रहण करने योग्य सम्यग्दर्शन-ज्ञानादिक का स्वरूप पहिचानना।

(४) निमित्त-नैमित्तिक, निश्चय-व्यवहार, उपादान-उपादेय, छह कारक, चार अभाव, छह सामान्य गुण आदि को जैसे हैं वैसे ही जानना - इत्यादि जिनके जानने से मोक्षमार्ग में प्रवृति हो, उन्हे अवश्य जानना चाहिए, क्योंकि यह सब प्रयोजनभूत है।

प्रश्न १२४—प्रयोजनभूत तत्त्वो को जीव यथार्थ जाने-माने तो उसे क्या लाभ होगा ?

उत्तर—यदि उन्हे यथार्थ रूप से जाने-श्रद्धान करे तो उसका सच्चा सुधार होता है अर्थात् सम्यग्दर्शन प्रगट होकर पूर्णदशा की प्राप्ति हो जाती हैं।

प्रश्न १२५—जीव को धर्म समझने का क्रम क्या है ?

उत्तर—(१) प्रथम तो परीक्षा द्वारा कुदेव, कुगुरु, और कुधर्म की मान्यता छोडकर, अरहत देवादिका श्रद्धान करना चाहिए, क्योंकि उनका श्रद्धान करने से गृहीत मिथ्यात्वका अभाव होता है।

(२) फिर जिनमत मे कहे हुए जीवादि तत्त्वो का विचार करना चाहिये, उनके नाम लक्षणादि सीखना चाहिये, क्योंकि उस अभ्यास से तत्त्व श्रद्धान की प्राप्ति होती है।

(३) फिर जिनसे स्व-पर का भिन्नत्व भासित हो, वैसे विचार

करते रहना चाहिए, क्योंकि उस अभ्यास से भेदज्ञान होता है।
(४) तत्पश्चात्, एक स्व में स्व-पना मानने के हेतु स्वरूप का विचार करते रहना चाहिए, क्योंकि उस अभ्यास से आत्मानुभव की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार अनुक्रम से उन्हें अंगीकार करके फिर उसी मे से, किसी समय देवादि के विचार में, कभी तत्त्व के विचार मे, कभी स्व-पर के विचार मे, तथा कभी आत्म विचार मे उपयोग को लगाना चाहिये। यदि पात्र जीव पुरूषार्थ चालू रक्खे तो इसी अनुक्रम से उसे सम्यकदर्शन की प्राप्ति हो जाती है।

प्रश्न १२६—जिनदेव के सर्व उपदेश का क्या तात्पर्य है?

उत्तर—मोक्ष को हितरूप जानकर एक मोक्ष का उपाय करना ही सर्व उपदेश का तात्पर्य है।

प्रश्न १२७—चारित्र का लक्षण (स्वरूप) क्या है?

उत्तर—(१) मोह और क्षोभ रहित आत्मा का परिणाम वह चारित्र है।
(२) स्वरूप मे चरना वह चारित्र है।
(३) अपने स्वभाव मे प्रवर्तन करना, शुध्द चैतन्य का प्रकाशित होना वह चारित्र है।
(४) वही वस्तु का स्वभाव होने से धर्म है। जो धर्म है वह चारित्र है।
(५) वही यथास्थित आत्म गुण होने से (अर्थात् विषमता रहित-सुस्थित-आत्मा का गुण होने से) साम्य है।
(६) मोह-क्षोभ के अभाव के कारण अत्यन्त निर्विकार ऐसा जीव का परिणाम है [प्रवचसार गा० ७ तथा टीका से]

प्रश्न १२८—व्यवहार सम्यक्त्व किस गुण की पर्याय है?

उत्तर—सत्-देव-गुरु-शास्त्र-छह द्रव्य और सात तत्त्वों की श्रद्धा का राग होने से यह चारित्र गुण की अशुध्द पर्याय है, किन्तु श्रद्धा गुण की पर्याय नही है।

१२६—जिसको सच्चा देव-गुरु-धर्म का निमित्त बने, वह अपना कल्याण ना करे, तो इस विषय में भगवान की क्या आज्ञा है ?

उत्तर (१) जैसे-किसी महान दरिद्री को अवलोकन मात्र से चिन्तामणि की प्राप्ति होने पर भी, उसको न अवलोके। तथा जैसे-किसी कोढी को अमृत पान कराने पर भी, वह न करे, उसी-प्रकार ससार पीडित जीव को सुगम मोक्षमार्ग के उपदेश का निमित्त बनने पर भी, वह अभ्यास ना करे तो उसके अभाग्य की महिमा कौन कर सके ?

(२) वर्तमान मे सत्गुरु का योग मिलने पर भी तत्त्वनिर्णय करने का पुरुषार्थ ना करे, प्रमाद से काल गँवाये, या मन्द रागादि सहित विषयकषायो मे ही प्रवर्ते, या व्यवहार धर्म कार्यों में प्रवर्ते तो अवसर चला जावेगा और ससार में ही भ्रमण रहेगा।

(३) यह अवसर चूकना योग्य नही, अब सर्व प्रकार से अवसर आया है, ऐसा अवसर पाना कठिन है इसलिए वर्तमान में श्रीसत्गुरु दयालु होकर मोक्षमार्ग का उपदेश देते हैं भव्य जीवो को उसमे प्रवृत्ति करनी चाहिये।

प्रश्न १३०—सम्यग्दर्शन का लक्षण प० टोडरमल जी ने किसे कहा है, और सम्यग्दर्शन क्या है ?

उत्तर—विपरीताभिनिवेश रहित जीवादिक तत्त्वार्थं श्रद्धान वह सम्यग्दर्शन का लक्षण है। और सम्यग्दर्शन आत्मा के श्रद्धा गुण की स्वभावअर्थ पर्याय है।

प्रश्न १३१—सम्यग्दर्शन सविकल्प है या निर्विकल्प है ?

उत्तर—सम्यग्दर्शन निर्विकल्प शुद्ध भाव रूप परिणमन है और किसी भी प्रकार से सम्यग्दर्शन सविकल्प नही है। यह चौथे गुणस्थान से सिद्ध दशा तक एक रूप है।

प्रश्न १३२—प० टोडरमल जी ने चौथे से सिद्ध तक सम्यग्दर्शन एक समान है इस विषय मे क्या कहा है ?

उत्तर—ज्ञानादिक की हीनता—अधिकता होने पर भी तिर्यंचादिक व केवली-सिद्ध भगवान के सम्यक्त्व गुण समान ही कहा है", तथा चिट्ठी मे लिखा है कि "चौथे गुणस्थान मे सिद्ध समान क्षायिक सम्यक्त्व हो जाता है इसलिए सम्यक्त्व तो यथार्थ श्रद्धान रूप ही है"। "निश्चयसम्यक्त्व प्रत्यक्ष है और व्यवहार सम्यक्त्व परोक्ष है" ऐसा नही हैं। इसलिए सम्यक्त्व के प्रत्यक्ष-परोक्ष भेद नही मानना।

प्रश्न १३३—क्या निश्चय और व्यवहार—ऐसे दो प्रकार के सम्यग्दर्शन है ?

उत्तर—बिल्कुल नही, सम्यग्दर्शन एक ही प्रकार है दो प्रकार का नही हैं किन्तु उसका कथन दो प्रकार से हैं।

प्रश्न १३४—चारो अनुयोगो मे प्रथम सम्यग्दर्शन का उपदेश क्यो दिया ?

उत्तर—यम नियमादि करने पर भी, सम्यग्दर्शन के बिना धर्म की शुरुआत, वृद्धि, पूर्णता नही होती। इसलिए चारो अनुयोगो मे प्रथम सम्यग्दर्शन का ही उपदेश दिया है।

प्रश्न १३५—क्या सम्यग्दर्शन प्राप्त किये बिना व्यवहार नही होता ?

उत्तर- नही होता है, क्योकि सम्यग्दर्शन स्वय व्यवहार हैं और

त्रिकाली ज्ञायक स्वभाव वह निश्चय है ।

प्रश्न १३६—सम्यग्दर्शन प्राप्त किये बिना व्यवहार नही होता है ऐसा कहाँ कहा है ?

उत्तर—चारो अनुयोगो मे कहा है मुख्य रूप से श्री प्रवचनसार गा० ९४ मे "मात्र अचलित चेतना वह ही मैं हूँ ऐसा मानना-परिणमित होना सो आत्म व्यवहार है" अर्थात् आत्मा के आश्रय से जो सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्र प्रगट होता है वह व्यवहार है।

प्रश्न १३७—अज्ञानी व्यवहार किसे कहता है ?

उत्तर—बाहरी क्रिया और शुभ विकारी भावो को व्यवहार कहता है और उसका फल चारो गतियो का परिभ्रमण है ।

प्रश्न १३८—सम्यग्दर्शन होने पर ससार का क्या होता है ?

उत्तर—(१)जैसे पत्थर पर बिजली पडने पर टूट जाने से वह फिर जुडता नही है, उसी प्रकार सम्यग्दर्शन होने पर ज्ञानी ससार मे जुडता ही नही है बल्कि श्रावक, मुनि, श्रेणी मॉडकर परम निर्वाण को प्राप्त करता है ।

प्रश्न १३९—आप प्रथम सम्यग्दर्शन की ही बात क्यो करते हो, व्रत दान पूजादि की बात तथा शास्त्र पढने आदि की बात क्यो नही करते हो ?

उत्तर—सम्यग्दर्शन प्राप्त किये बिना व्रत, दान, पूजादि मिथ्या चारित्र, तथा शास्त्र पढ़ना आदि मिथ्याज्ञान है इसलिए हम व्रत दानादि की प्रथम बात नहीं करते, बल्कि सम्यग्दर्शन की बात करते है क्योंकि सम्यग्दर्शन प्राप्त होने पर जितना ज्ञान है वह सम्यग्ज्ञान है और जो चारित्र है वह सम्यक्चारित्र है। इसलिए प्रथम सम्यग्दर्शन की बात करते है । छः ढाला में कहा है : मोक्षमहल की परथम सीढ़ी, या बिन ज्ञान चरित्रा;

सम्यक्ता न लहै, सो दर्शन, धारो भव्य पवित्रा।
"दौल" समझ, सुन, चेत, सयाने, काल वृथा मत खोवै
यह नर भव फिर मिलन कठिन हैं जो सम्यक् नहिं होवै ।।

प्रश्न १४०—निश्चयाभासी किसे कहते हैं ?

उत्तर—जो जीव आत्मा के त्रिकाली स्वरूप को स्वीकार करे, किन्तु यह स्वीकार न करे कि अपनी भूल के कारण वर्तमान पर्याय मे विकार है, उसे निश्चयाभासी कहते हैं।

प्रश्न १४१—निश्चयाभासी की प्रवृति कैसी होती है।

उत्तर—[अ] (१) मैं सिद्ध समान शुद्ध हू, (२) केवलज्ञानादि सहित हू, (३) द्रव्यकर्म, नोकर्म रहित हू, (४) परमानन्दमय हू, (५) जन्ममरणादि दु.ख मेरे नही है इत्यादि चिंतवन करता है।

[आ] (१) शास्त्राभ्यास करना निरर्थक बतलाता है, (२) द्रव्यादिक के तथा गुणस्थान, मार्गणा, त्रिलोकादिक के विचार को विकल्प ठहराता है, (३) तपश्चरण करने को वृथा क्लेश करना मानता है, (४) व्रतादिक धारण करने को बन्धन मे पडना ठहराता है, (५) पूजनादि कार्यों को शुभास्रव जानकर हेय प्ररूपित करता है,—इत्यादि की सर्व साधनो को उठाकर प्रमादी होकर परिणमित होता है यह निश्चयाभासी की प्रवृति है।

प्रश्न १४२—व्यवहारभासी किसे कहते है।

उत्तर—प्रथम व्यवहार चाहिए, व्यवहार करते करते निश्चयधर्म प्रगट होता है, ऐसा मानकर शुभराग करता है परन्तु अपने त्रिकाली स्वभाव को नही मानता और न अपने स्वभाव के सन्मुख होता है। सच्चे देव-गुरु-शास्त्र तथा सात तत्त्वों की व्यवहार श्रद्धा करता है परन्तु निमित्त और व्यवहार की रुचि

नही छोड़ता है उसे व्यवहाराभासी कहते हैं।

प्रश्न १४३—व्यवहाराभासी मे धर्म साधन किस प्रकार का पाया जाता है?

उत्तर-(१)कोई कुल अपेक्षा धर्म विचारकरते हैं (२) कोइ परिक्षा रहित शास्त्र की आज्ञा मानते हैं। (३) कोईपरीक्षा करके जैनी होते हैं, परन्तु मूल परीक्षा नही करते हैं, (४) कोई सगति से जैन धर्म धारण करते हैं; (५,कोई आजीविका के लिए बडाई आदि के लिए जैन धर्म धारण करते हैं। (६) देव-गुरु शास्त्र का, सात तत्त्वो का सच्चा श्रद्धान, सच्चा ज्ञान और सच्चा आचरण नहीं करते हैं उल्टा श्रद्धानादि करते है। यह व्यवहारभासियो की प्रवृति है।

प्रश्न १४४—उभयाभासी किसे कहते हैं?

उत्तर—जैसे निश्चयाभासी निश्चय का अगीकार करते है और व्यवहाराभासी व्यवहार का अगीकार करते हैं, उसी प्रकार उभयाभासी दोनों को अगीकार करना मानता है उसे उभयाभासी कहते है।

प्रश्न १४५—उभयाभासी की मान्यता क्या क्या हैं?

उत्तर—(१) वास्तव मे मोक्षमार्ग तो एक ही प्रकार का है परन्तु वह दो प्रकार का मानता है।

(२) वास्तव मे निश्चयमोक्षमार्ग प्रगट करने योग्य उपादेय और व्यवहार मोक्षमार्ग हेय है परन्तु वह निश्चय और व्यवहार दोनों को मोक्षमार्ग और उपादेय मानता है।

प्रश्न १४६—निश्चयाभासी, व्यवहाराभासी और उभयाभासीकी उत्पत्ति कहां से हुई?

उत्तर—जिनवाणी मैं तो नाना नयो की अपेक्षा से कही कैसा, कहीं कैसा, निरुपण किया है उसका मर्म ना जानने से तीन प्रकार

के मिथ्यादृष्टियो की उत्पत्ति हुई ।

प्रश्न १४७—शुभभाव से मोक्षमार्ग क्यो नही है ?

उत्तर—(१) श्री प्रवचनसार गा० ११ की टीका में कहा है कि "शुद्धोपयोग उपादेय है और शुभोपयोग हेय है" ।

(२) पुरुषार्थसिद्ध्युपाय में कहा है "शुभोपयोग अपराध है" चारो अनुयोगो मे एकमात्र अपने भूतार्थ के आश्रय से ही मोक्षमार्ग और मोक्ष भगवान ने कहा है। और शुभभाव किसी का भी हो वह तो ससार का ही कारण है। इसलिए शुभभावो से कभी भी मोक्षमार्ग और मोक्ष नही होता है ।

प्रश्न १४८—मिश्रदशा दशा क्या है ?

उत्तर—जिसने अपने स्वभाव का आश्रय लिया, उसे मोक्ष तो नही हुआ, परन्तु मोक्षमार्ग हुआ। (१) मोक्षमार्ग मे कुछ वीतराग हुआ है कुछ सराग रहा है। (२) जो अ श वीतराग हुए उनसे सम्वर निर्जरा है और जो अ श सराग रहे उनसे बध है । ऐसे भाव को मिश्रदशा कहते है।

१४९—मिश्रदशा मे निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उतर—जो शुद्धि प्रगटी वह नैमित्तिक है और भूमिकानुसार राग निमित्त है ।

प्रश्न १५०—क्या जाने तो धर्म की प्राप्ति हो ?

उत्तर—(१) मेरा स्वभाव अनादिअनन्त एक रूप है। (२) मेरी वर्तमान पर्याय मे मेरे ही अपराध से एक समय की भूल है उस भूल मे निमित्तकारण द्रव्यकर्म नोकर्म है, मैं नही हूँ। ऐसा जानकर अपने अनादिअनन्त एकरूप स्वभाव का आश्रय ले तो धर्म की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष का पथिक बने ?

१६-जिन, जिनवर, जिनवरवृषभ कथित मोक्षमार्ग अधिकार सम्पूर्ण

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

जीव के असाधारण पांच भावों का वर्णन

मंगलाचरण

नहि स्थान क्षायिक भाव के, क्षायोपशमिक तथा नहीं।
नहि स्थान उपशम भाव के, होते उदय के स्थान नहिं।

॥ नियमसार गा० ४१ ॥

प्रश्न (१)—अपने आत्मा का हित चाहने वालो को क्या करना चाहिए ?

उत्तर—अत्यन्त भिन्न पदार्थों से, औदारिक, तैजस, कार्माण शरीरो से, भाषा से और मन से तो मेरा किसी भी प्रकार का, किसी भी अपेक्षा, कर्ता-भोक्ता का तो सम्बन्ध है ही नहीं। मात्र व्यवहार से का ज्ञेय-ज्ञायक सम्बन्ध है। ऐसा जानकर पात्र जीवो को अपने निज भावो की पहिचान करनी चाहिए।

प्रश्न (२)-अपने निज भावों की पहिचान क्यों करनी चाहिए ?

उत्तर—(१) कौनसा निज भाव आश्रय करने योग्य है (२) कौनसा भाव छोड़ने योग्य है। (३) कौनसा भाव प्रगट करने योग्य है। इसलिए प्रयोजनभूत बातो का निर्णय करने के लिए पांच असाधारण भावो का स्वरूप जानना आवश्यक है।

प्रश्न (३)—आचार्यकल्प प० टोडरमल जी ने इस विषय में क्या कहा है ?

उत्तर—जीव को तत्त्वादिक का निश्चय करने का उद्यम करना

चाहिए, क्योंकि इससे औपशमिकादि सम्यक्त्व स्वय होता है। द्रव्यकर्म के उपशमादि पुद्गल की पर्याय है। जीव उसका कर्ता-हर्ता नही।

प्रश्न (४)-जीव के असाधारण भावो के लिए आचार्यों ने कोई सूत्र कहा है ?

उत्तर—"औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौद-यिक पारिणामिकौ च" [तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय दूसरा सूत्र प्रथम]

प्रश्न (५)-जीव के असाधारण भाव कितने हैं ?

उत्तर—पाच हैं, (१) औपशमिक, (२) क्षायिक, (३) क्षायोपशमिक, (४) औदयिक, और (५) पारिणामिक, यह पाच भाव जीवो के निजभाव है। जीव के अतिरिक्त अन्य किसी मे नही होते है।

प्रश्न (६)-इन पाँच भावो मे यह क्रम होने का क्या कारण है ?

उत्तर—(१) सबसे कम सख्या औपशमिक भाव वालो की है। (२) औपशमिक भाव वालो से अधिक सख्या क्षायिकभाव वाले जीवो की है (३) क्षायिकभाव वालो से अधिक सख्या क्षायोपशमिक भाव वाले जीवो की है। (४) क्षायोपशमिक भाव वालो से भी अधिक सख्या औदयिक भाव वालो की है। (५) सबसे अधिक सख्या पारिणामिक भाव वाले जीवो की है। इसी क्रम को लक्ष मे रखकर इन भावो का क्रम रक्खा गया है।

प्रश्न (७)-कौन कौन से भाव मे कौन कौन जीव आये और कौन कौन से निकल गये ?

उत्तर—(१) पारिणामिक भाव मे निगोद से लगाकार सिद्ध तक सब जीव आगये। (२) औदयिक भाव मे सिद्ध कम हो गये। (३) क्षायोपशमिक भाव मे-अरहत और कम हो गये। (४) क्षायिक भाव में-छदमस्थ निकल गये मात्र अरहत सिद्ध

रह गये (क्षायिक सम्यक्त्वी और क्षायिक चारित्र वाले जीव गौण हैं) (५) औपशमिक भाव में मात्र औपशमिक सम्यग्-दृष्टि तथा औपशमिक चारित्र वाले जीव रहे।

प्रश्न (८)-औपशमिक भाव को प्रथम लेने का क्या कारण है ?

उत्तर—तत्त्वार्थ सूत्र जी मे भगवान उमास्वामी ने प्रथम अध्याय में प्रथम सम्यग्दर्शन की बात की है, क्योंकि इसके बिना धर्म की शुरुआत नही होती है।

उसी प्रकार दूसरे अध्याय के प्रथम सूत्र मे औपशमिक भाव की बात की है क्योंकि औपशमिक भाव के बिना सम्यग्दर्शन नही होता है। इसलिए प्रथम औपशमिक भाव को लिया है।

प्रश्न (९)-इन पाँचो भावो से क्या सिद्ध हुआ ?

उत्तर—(१) पारिणामिक भाव के बिना कोई जीव नही।

(२) औदयिक भाव के बिना कोई ससारी नही।

(३) क्षायोपशमिक भाव के बिना कोई छदमस्थ नही।

(४) क्षायिक भाव के बिना अरहत और सिद्ध नही अर्थात् क्षायिक भाव के बिना केवल ज्ञान और मोक्ष नही।

(५) औपशमिक भाव के बिना धर्म की शुरुआत नही।

प्रश्न (१०)-असाधारण भाव किसे कहते हैं ?

उत्तर—(१) असाधारण का अर्थ तो यह है कि ये भाव आत्मा मे ही पाये जाते हैं, अन्य पाच द्रव्यो में नही पाये जाते हैं।

(२) आत्मा में किस किस जाति के भाव-(परिणाम) पाये जाते हैं और इनके द्वारा जीव को अपने का स्पष्ट सम्पूर्ण ज्ञान द्रव्य गुण पर्याय सहित हो जाता है।

प्रश्न (११)--इन भावो के जानने से ज्ञान में स्पष्टता कैसे आ जाती है ?

उत्तर—हानिकारक अथवा लाभदायक परिणामों का ज्ञान हो जाता है जैसे (१) औदयिक भाव हानिकारक और दुःख रूप है। (२) औपशमिक भाव और धर्म का क्षायोपशमिक भाव मोक्षमार्ग रुप है। (३) क्षायिक भाव मोक्ष का स्वरूप है (४) पारिणामिक भाव आश्रय करने योग्य ध्येय रूप है (५) क्षायिकज्ञान दर्शन, वीर्य जीव का पूर्ण स्वभाव पर्याय मे है और क्षायो-पशमिक एक देश स्वभाव भी पर्याय मे है। मिथ्यादृष्टि का ज्ञान मिथ्याज्ञान रूप है इस प्रकार अच्छे बुरे परिणामों का ज्ञान हो जाता है।

प्रश्न (१२)—औपशमिक भाव किसे कहते है ?

उत्तर—कर्मोंकेउपशम के साथ सबधवाला, आत्मा का जो भाव होता है, उसे औपशमिक भाव कहते है।

प्रश्न (१३)—कर्म का उपशम क्या है ?

उत्तर—आत्मा के पुरषार्थ का निमित्त पाकर जड कर्म का प्रगट रुप फल, जड़ कर्म रुप मैं न आना, वह कर्म का उपशम है।

प्रश्न (१४)—औपशमिक भाव के कितने भेद है ?

उत्तर—(१) औपशमिक सम्यक्त्व, (२) औपशमिक चारित्र।

प्रश्न (१५)—औपशमिक सम्यक्त्व और औपशमिक चारित्र क्या है?

उत्तर—औपशमिक सम्यक्त्व, श्रद्धा गुण की क्षणिक स्वभावअर्थ पर्याय है और औपशमिकचारित्र, चारित्र गुण की क्षणिक स्वभाव अर्थ पर्याय है। यह दोनो सादिसान्त भाव है।

प्रश्न (१६)—औपशमिक सम्यक्त्व और औपशमिक चारित्र कौन २ से गुणस्थान मे होता हैं ?

उत्तर—औपशमिक सम्यक्त्व तो चौथे से सातवें तक हो सकता है। और औपशमिक चारित्र मात्र ग्यारहवें गुणस्थान में होता है।

प्रश्न (१७)- क्षायिक भाव किसे कहते हैं ?
उत्तर—कर्मों के सर्वथा नाश के साथ सम्बंधवाला आत्मा का अत्यन्त शुद्धभाव का प्रगट होना, वह क्षायिक भाव है।

प्रश्न (१८)--कर्म का क्षय क्या है ?
उत्तर—आत्मा के पुरुषार्थ का निमित्त पाकर कर्म-आवरण का नाश होना वह कर्म का क्षय है।

प्रश्न (१९)--क्षायिकभाव के कितने भेद हैं ?
उत्तर–नौ भेद है :—(१) क्षायिकसम्यक्त्व (२) क्षायिकचारित्र (३) क्षायिकज्ञान (४) क्षायिकदर्शन (५) क्षायिकदान (६) क्षायिकलाभ (७) क्षायिकयोग (८) क्षायिकउपभोग (९) क्षायिकवीर्य है तथा इसको क्षायिक लब्धि भी कहते हैं।

प्रश्न (२०)--यह नौ क्षायिकभाव क्या है ?
उत्तर--आत्मा के भिन्न भिन्न अनुजीवी गुणो की क्षायिक पूर्ण स्वभाव अर्थ पर्याय है।

प्रश्न (२१)--यह ९ भाव कब प्रगट होते है और कब तक रहते हैं ?
उत्तर—यह भाव १३ वें गुणस्थान मे प्रगट होकर सिद्धदशा में अनन्तकाल तक धारा प्रवाहरुपसे सादिअनन्त रहते हैं। क्षायिक सम्यक्त्व किसी २ को चौथे गुणस्थान में, किसी २को पांचवें मे, किसी २ को छठे में, किसी २ को सातवे में हो जाता है। और क्षायिक चारित्र १२वे गुणस्थान में प्रगट हो जाता है। प्रगट होने पर सादिअनन्त रहता है।

प्रश्न (२२)--क्षायोपशमिक भाव किसे कहते हैं ?
उत्तर—कर्मों के क्षायोपशम के साथ सम्बन्धवाला जो भाव होता है वह क्षायोपशमिक भाव कहते है।

प्रश्न (२३)--कर्म का क्षयोपशम क्या है ?

उत्तर—आत्मा के पुरुषार्थ का निमित्त पाकर कर्म का स्वयं अ शत: क्षय और स्वय अ-शतः उपशम, यह कर्म का क्षयोपशम है।

प्रश्न (२४)—क्षायोपशमिक भाव के कितने भेद हैं ?

उत्तर—१८ भेद हैं :— ४ ज्ञान [मति, श्रुत, अवधि मन:पर्यय] ३ अज्ञान [कुमति, कुश्रुत, विभग] ३ दर्शन [चक्षु, अचक्षु अवधि] ५ क्षायोपशमिक [दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य] १ क्षायोपशमिकसम्यक्त्व, १ क्षायोपशमिकचारित्र १ सयमासयम। यह सब भाव सादिसान्त हैं।

प्रश्न (२५)—१८ क्षायोपशमिक किस २ गुण की कौन२सी पर्याय है?

उत्तर—४ ज्ञान-यह ज्ञान गुण की एक देश स्वभावअर्थ पर्याय है। ३ अज्ञान—यह ज्ञान गुण की विभाव अर्थ पर्याय हैं। ३ दर्शन-यह दर्शन गुणकी अर्थपर्यायें है। दान, लाभ, भोग, उपभोग वीर्य-यह आत्मा में पाँच स्वतन्त्र गुण है यह पाच स्वतन्त्र गुण एक देश स्वभावअर्थ पर्याय हैं और अज्ञानी की विभावअर्थ पर्याय है।

१ क्षायोपशमिक सम्यक्त्व--श्रद्धागुण की क्षायोपशमिक स्वभाव अर्थ पर्याय है।

२ क्षायोपशमिक सयम, और सयमासयम—चारित्र गुण की एकदेश स्वभावअर्थ पर्याय है।

प्रश्न (२६)—यह क्षायोपशमिक भाव कौन २ से गुणस्थान में पाये जाते हैं ?

उत्तर—(१) ४ ज्ञान-जो चौथे से १२वें गुणस्थान तक पाये जाते हैं।
(२) ३ अज्ञान-पहले तीन गुण स्थानों मे पाये जाते हैं।
(३) ३ दर्शन और ५ दाना दक—पहले से १२ वें गुणस्थान तक पाये जाते है।

(४) क्षायोपशमिक सम्यक्त्व-चौथेसे सातवें तक पाया जाता है।

(५) संयमसयम—पाँचवे गुणस्थान म पाया जाता है।

(६) क्षायोपशमिकसयम(चारित्र)-छठे सेदसवें तक पाया जाता है

प्रश्न (२७)--औदयिक भाव किसे कहते है ?

उत्तर—कर्मों के उदय के साथ सम्बध रखने वाला आत्मा का जो विकारी भाव होता है उसे औदयिक भाव कहते है।

प्रश्न (२८)–औदयिक भाव के कितने भेद हैं ?

उत्तर—२१ भेद हैं; ४ गति भाव। ४ कषाय भाव। ३ लिंग भाव १ मिथ्यादर्शन भाव। १ अज्ञान भाव। १ असयमभाव। १ असिद्धत्व भाव। ६ लेश्या भाव।

प्रश्न (२९)--गतिनाम का औदयिकभाव कितने प्रकार का है ?

उत्तर—दो प्रकार का है। (१) जीव के गति विषयक मोजभाव जो बध का कारण है वह औदयिक भाव है।

(१) जीव में सूक्ष्मत्व प्रतिजीवी गुण है उसका अशुद्ध परिणमन १४ वें गुणस्थान तक है वह नैमित्तिक है। अघाति कर्मों मे नामकर्म और नामकर्म के अन्तर्गत गतिकर्म तथा आंगोपाग नामकर्म निमित्त हैं। यह औदयिक गति रूप जीव का उपादान परिणाम है। जो बध का कारण नही है।

गति नामकर्म के सामने जीव की मनुष्य आकारादि विभावअर्थ पर्याय और विभाव व्यजन पर्याय मे स्थूलपने का व्यवहार ससार दशा तक चालू रहता है-यह गति औदयिक भाव जीव मै है। जो चौदहवें गुणस्थान तक रहता है।

याद रहे — अघाति के उदयवाला गति औदयिक भाव तो बध का कारण नही है। परन्तु मोह हो गति औदयिक भाव बंध का कारण होने से हानिकारक है।

प्रश्न (३०)--मोहज गति औदयिक भाव मे निमित्त निमित्तक क्या है?

उत्तर—गति सबन्धी औदयिक भाव मिथ्यात्व राग द्वष रुप नैमित्तिक है और दर्शनमोहनीय का उदय निमित्त है।

प्रश्न (३१)--अघातिगति औदयिक भाव मैं मोहज गति सबधी राग द्वेष मिथ्यात्व को क्यो मिला दिया ?

उत्तर– मोह के उदय को, गति के उदय पर आरोप करके निरुपण करने की आगम की पद्धति है। इसलिए चारो गतियो में जो उस गति के अनुसार मिथ्यात्व रागद्वेष रुप भाव है-वे ही उस गति के औदयिक भाव है।

प्रश्न (३२)--मोह राग द्वेष सबधी गति औदयिक भाव को जरा द्रष्टान्त देकर समझाओ ?

उत्तर – जैसे- बिल्ली को जो चूहा पकडते का मोहज भाव है वह उस तिर्यचगति का गतिऔदयिक भाव के नाम से लोक तथा आगम मे प्रसिद्ध है। इसी प्रकार चारो गतियो मे उस उस प्रकार के गति औदयिक भाव है। जैसे (१) स्त्री में स्त्री जैसा राग, पुरुष मे पुरुष जैसा राग, देव में देव जैसा राग, बन्दर मे बन्दर जैसा राग, कुत्तो मे कुत्तो जैसा राग, यह गति औदयिक भावों का सार है।

प्रश्न (३३)--गति के अनुसार ऐसा औदयिकभाव क्यो हैं ?

उत्तर—'जैसी गति, वैसी मति' ऐसा निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है।

प्रश्न (३४) -गति औदयिकभाव में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर–(१)सूक्ष्मत्व प्रतिजीवी गुण की विकारी दशा नैमित्तिक है और नामकर्म का उदय निमित्त है। परन्तु यह बध का कारण नही है।

प्रश्न (३५)--मोहज गति औदयिक भाव मे निमित्त नमित्तिक कौन है?

उत्तर—गति सम्बंधी मोह राग द्वेष भाव नैमित्तिक है। और दर्शनमोहनीय, चारित्रमोहनीय का उदय निमित्त है।

प्रश्न (३६)--कषाय, लिंग असयम में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर—चारित्र गुण की विकारी दशा नैमित्तिक है और चारित्र मोहनीय का उदय निमित्त है।

प्रश्न (३७)--अज्ञान औदयिक भाव मे निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर—आत्मा में जितना ज्ञान, सुज्ञान रुप से या कुमति आदि रुप से विद्यमान है वह सब तो क्षायोपशमिक ज्ञान भाव है और जीव का पूर्ण स्वभाव केवलज्ञान है।

जितना ज्ञान का प्रगटपना है उतना क्षायोपशमिक ज्ञान भाव है और जितना ज्ञान का अप्रगटपना है उसको अज्ञान औदयिक भाव कहते है अतः अज्ञानभाव नैमित्तिक है और ज्ञानावरणी का उदय निमित्त है। यह सक्लेस रुप तो नही है, क्योंकि सक्लेस रुप तो रागद्वेष मोहभाव है इसीलिए यह बंध का कारण नही है। किन्तु दुख रुप अवश्य है क्योंकि इसके कारण स्वभाविक ज्ञान और सुख का अभाव हो रहा है।

प्रश्न (३८)--मिथ्यादर्शन में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर—मिथ्यादर्शन नैमित्तिक है और दर्शनमोहनीय का उदय निमित्तहै।

प्रश्न (३९)--असिद्धत्व भाव में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर—जैसे-सिद्ध दशा को सिद्धत्व भाव कहते है। तो सिद्धत्व भाव नैमित्तिक है और कर्मों का सर्वथा अभाव निमित्त है; उसीप्रकार पहिले गुणस्थान से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक असिद्धत्व भाव रहता है वह नैमित्तिक है और आठों कर्मों का उदय निमित्त है।

प्रश्न (४०)—आपने असिद्धत्व भाव को नैमित्तिक कहा और आठों कर्मों को निमित्त कहा; परन्तु असिद्धत्वभाव १४वें गुणस्थान तक होता है वहां आठों कर्मों का निमित्त कहां है?

उत्तर—जितनी मात्रा में भी आत्मा में संसार तत्त्व है, वह असिद्धत्व है। किसी भी प्रकार का विकार हो चाहे वह केवल योग जनित हो, या प्रतिजीवी गुणों का ही विपरीत परिणमन हो वह सब असिद्धत्वभाव है वह नैमित्तिक हैं, वहां पर जैसा-जैसा कर्म का उदय हो, उतना निमित्त समझना। जैसे अरहंत दशा मे प्रतिजीवी गुण का विकार नैमित्तिक है और चार अघातियां कर्म निमित्त है।

प्रश्न (४१)—लेश्या के भावो में निमित्त नैमित्तिक क्या है?

उत्तर—कषाय से अनुरंजित योग को लेश्या कहते है। अत: लेश्या का भाव, नैमित्तिक है जो योग का सहचर है और मोहनीय कर्म का उदय निमित्त है।

प्रश्न (४२) औदयिक भावो से क्या तात्पर्य है?

उत्तर—अज्ञान और असिद्धत्व भाव को छोडकर १९ औदयिकभाव तो मोहभाव के अवान्तर भेद हैं। बंध साधक है जीव के लिए महा अनिष्टकारक है अनन्त ससार का कारण है। वैसे वास्तव में तो मिथ्यात्व (मोह) ही अनन्त ससार है परन्तु मोह निमित्त होने से गति आदि को दुःख का कारण कहा जाता है। हैं नहा। अज्ञान औदयिक भाव अभाव रूप है। इसमे सीधा पुरूषार्थ नहीं चल सकता है किन्तु मोहभावों का अभाव होने पर यह स्वयं ही नष्ट हो जाता है। इसलिए एक परम पारणामिक भाव का आश्रय लेकर औदयिक भावो का अभाव करके पात्र जीवों को अपने स्वभाविक सिद्धत्वपना पर्याय मे प्रगट कर लेना यह

औदयिकभावों के जानने का सार है।

प्रश्न (४३)--क्या सर्व औदयिक भाव बंध के कारण हैं ?

उत्तर--सर्व औदयिक भाव बंध के कारण है ऐसा नही समझना चाहिए, मात्र मिथ्यात्व, असयम, कषाय और योग यह चार बंध के कारण है।

(धवला पुस्तक ७ पृष्ट ६)

प्रश्न (४४)--क्या कर्म का उदय बंध का कारण है ?

उत्तर--(१) यदि जीव मोह के उदय में युक्त हो, तो बंध होता है, द्रव्य मोह का उदय होने पर भी, यदि जीव शुद्धात्मभावना (एकाग्रता) के बल द्वारा मोहभावरूप परिणमित ना हो तो बंध नहीं होता।

(१) यदि जीव को कर्मोदय के कारण बंध होता हो तो संसारी को सर्वदा कर्म का उदय विद्यमान है, इसलिए उसे सर्वदा बंध होगा, कभी मोक्ष होगा ही नहीं।

(३) इसलिए ऐसा समझना कि कर्म का उदय बंध का कारण नहीं है किन्तु जीव का मोहभाव रुप परिणमन बंध का कारण है। (प्रवचनसार हिन्दी जयसेनाचार्य गा० ४५ की टीका से)

प्रश्न (४५)-- औदयिक भाव में जो अज्ञान भाव है और क्षायोपशमिक भाव में जो अज्ञान भाव है, उसमें क्या अन्तर है ?

उत्तर--"औदयिक भाव मे जो अज्ञानभाव है वह अभाव रुप है और क्षायोपशमिक भाव में जो अज्ञानभाव है वह मिथ्यादर्शन के कारण दूषित होता है।

[मोक्षशास्त्र हिन्दी पं० फूलचन्द जी संपादित पृष्ट ३१ फुट नोट]

प्रश्न (४६)--पारिणामिक भाव किसे कहते हैं?

उत्तर--(१) कर्मों का उपशम, क्षय, क्षयोपशम, अथवा उदय की

अपेक्षा रखे विना, जीव का जो स्वभाव मात्र हो, उसे पारि-
मिक भाव कहते है।

(२) जिसका निरन्तर सदभाव रहे, उसे पारिणामिक भाव कहते हैं। सर्व-भेद जिसमे गर्भित हैं ऐसा चैतन्य भाव हो जीव का पारिणामिक भाव है।

प्रश्न (४७)--पारिणामिक भाव के कितने भेद हैं ?

उत्तर—(१) जीवत्व (२) भव्यत्व (३) अभव्यत्व।

प्रश्न (४८)--जीवत्व भाव के पर्यायवाची शब्द क्या क्या हैं ?

उत्तर—ज्ञायकभाव, पारिणामिकभाव, परमपारिणामिकभाव, परम पूज्य पचमभाव, कारण शुद्ध पर्याय आदि अनेक नाम हैं।

प्रश्न (४९)—पारिणामिक भाव क्या बताता है ?

उत्तर—जीव का अनादिअनन्त शुद्ध चैतन्य स्वभाव है अर्थात् भगवान बनने की शक्ति है, यह पारिणामिक भाव सिद्ध करता है।

प्रश्न (५०)—औदयिक भाव क्या बताता है ?

उत्तर—(१) जीव मे भगवान बनने की शक्ति होने पर भी उसकी अवस्था में विकार है, ऐसा औदयिक भाव सिद्ध करता है।

(२) जडकर्म के साथ जीव का अनादिकाल से एक एक समय का सम्बन्ध है, जीव उसके वश होता है, इसलिए विकार होता है। किन्तु कर्म के कारण विकार भाव नही होता है ऐसा भी औदयिक भाव सिद्ध करता है।

प्रश्न (५१)--क्षायोपशमिक भाव क्या बताता है ?

उत्तर—(१) जीव अनादि से विकार करता आ रहा है। तथापि वह जड़ नही हो जाता और उसके ज्ञान, दर्शन तथा वीर्य का अशत. विकास तो सदैव रहता है-ऐसा क्षायोपशमिक भाव सिद्ध करता है।

(२) सच्ची समझ के पश्चात् जीव ज्यो ज्यों सत्य पुरुषार्थ बढ़ाता है त्यो त्यो मोह अंशत: दूर होता जाता है ऐसा भी क्षायोपशमिकभाव सिद्ध करता है।

प्रश्न (५२)--औपशमिक भाव क्या बताता है ?

उत्तर—(१) आत्मा का स्वरूप यथार्थतया समझकर, जब जीव अपने पारिणामिक भाव का आश्रय करता है, तब औदयिक भाव दूर होना प्रारम्भ होता है और प्रथम श्रद्धा गुण का औदयिक भाव दूर होता है ऐसा औपशमिक भाव सिद्ध करता है।

(२) यदि जीव प्रतिहतभाव से पुरषार्थ में आगे बढे तो चारित्र मोह स्वय दब जाता है और औपशमिक चारित्र प्रगट होता है। ऐसा भी औपशमिक भाव सिद्ध करता है।

प्रश्न (५३)--क्षायिक भाव क्या सिद्ध करता है ?

उत्तर—(१) अप्रतिहत पुरषार्थ द्वारा पारिणामिक भाव का आश्रय बढने पर विकार का नाश हो सकता है ऐसा क्षायिकभाव सिद्ध करता है।

(२) यद्यपि कर्म के साथ का सम्बध प्रवाह से अनादिकालीन है। तथापि प्रतिसमय पुराने कर्म जाते हैं और नये कर्मों का सबध होता रहता है,उस अपेक्षा से उसमें प्रारम्भिकता रहने से (सादि होने से) वह कर्मों के साथ का सबध सर्वथा दूर हो जाता है ऐसा क्षायिक भाव सिद्ध करता है।

प्रश्न (५४)--औपशमिक भाव, साधक दशा का क्षायोपशमिक भाव, और क्षायिक भाव क्या सिद्ध करते हैं ?

उत्तर—(१) कोई निमित्त विकार नही कराता, किन्तु जीव स्वय निमित्ताधीन होकर विकार करता है।

(२) जीव जब पारिणामिक भाव रूप अपने स्वभाव की ओर

लक्ष करके स्वाधीनता प्रगट करता है तब निमित्ताधीनता दूर होकर शुद्धता प्रगट होती है ऐसा औपशमिक भाव, साधक दशा का क्षयोपशम भाव और क्षायिकभाव सिद्ध करता है।

प्रश्न (५५)–पांचभावों मे से किस भाव की ओर सन्मुखता से धर्म की शुरुआत, वृद्धि और पूर्णता होती है ?

उत्तर—(१) परिणामिक भाव के अतिरिक्त चारों भाव क्षणिक है। (२) क्षायिकभाव तो वर्तमान है नही। (३) औपशमिक भाव हो तो वह अल्पकाल टिकता है (४) औदयिकभाव और क्षायोपशमिक भाव भी प्रति समय बदलते हैं (५) इसलिए इन चार भावों पर लक्ष्य करे तो एकाग्रता नही हो सकती है, और ना ही धर्म प्रगट हो सकता है (६) त्रिकाल स्वभावी पारिणामिक भाव का माहात्म्य जानकर उस ओर जीव अपनी वृत्ति करे (झुकाव करे) तो धर्म का प्रारम्भ होता है और उस भाव की एकाग्रता के, बल से वृद्धि होकर, धर्म की पूर्णता होती है।

प्रश्न (५६)-ज्ञान दर्शन वीर्य गुण मे औपशमिक भाव क्यो नही होता है ?

उत्तर—इनका औपशमिक हो जावें, तो केवलज्ञान, केवल दर्शन आदि प्रगट हो जावे और कर्म सत्ता में पड़ा रहे लेकिन ऐसा नही हो सकता है।

प्रश्न (५७)–क्या मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय और केवलज्ञान परिणामिक भाव है ?

उत्तर—नही है, यह तो पाच पर्यायें हैं यह पारिणामिक भाव नहीं है।

प्रश्न (५८)–जीव मे विकार यह कौन सा भाव बताता है ?

उत्तर—औदयिक भाव बताता है।

प्रश्न (५६)-विकार में कर्म का उदय निमित्त होने पर भी कर्म विकार नही कराता है यह कौनसा भाव बताता है ?

उत्तर—औदयिक भाव बताता है।

प्रश्न (६०)-विकार होने पर भी ज्ञान, दर्शन, वीर्य का सर्वथा अभाव नही होता है यह कौनसा भाव बताता है ?

उत्तर—क्षायोपशमिक भाव बताता है।

प्रश्न (६१)—पात्रजीव मे मानसिक ज्ञान मे (१) मैं आत्मा हू और मेरे में भगवानपने की शक्ति है (२) विकार एक समय का औदयिक भाव रूप है (३) और मैं स्वभाव का आश्रय लू तो कल्याण हो, ऐसा निर्णय, कौन सा भाव बताता है ?

उत्तर—अज्ञान दशा मे पात्र जीव को ऐसा क्षायोपशमिक भाव बताता है।

प्रश्न (६२)-धर्म की शुरुआत कौन सा भाव बताता है ?

उत्तर—औपशमिक भाव, धर्म का क्षायोपशमिक भाव और क्षायिक भाव बताता है।

प्रश्न (६३)—११ वे गुणस्थान में जो चारित्र है वह कौन सा भाव बताता है ?

उत्तर—चारित्र का औपशमिक भाव बताता है।

प्रश्न (६४)—परिपूर्ण शुद्धि का प्रगट होना कौनसा भाव बताता है?

उत्तर—पूर्ण क्षायिक भाव बताता है।

प्रश्न (६५)—किस भाव के आश्रय से धर्म की शुरुआत होती है ?

उत्तर— एक मात्र पारिणामिक भाव के आश्रय से ही होता है।

प्रश्न (६६)—अज्ञानी का कुमति आदि ज्ञान दुःख रूप है या सुखरूप?

उत्तर—अज्ञानी का ज्ञान दुःख रूप नहीं है उसके साथ मोह का जुड़ान होने के कारण दुःख का कारण कहा जाता है क्योंकि

वह अपने ज्ञान को प्रयोजन भूत कार्य में ना लगाकर अप्रयोजन भूत कार्य मे लगाता है।

प्रश्न (६७)--सिद्ध अवस्था में कितने भाव होते हैं?
उत्तर—पारिणामिक भाव और क्षायिकभाव दो होते हैं।

प्रश्न (६८)--चौदहवें गुणस्थान मे कितने भाव होते हैं?
उत्तर—तीन हैं। पारिणामिक, क्षायिक और औदयिक भाव।

प्रश्न (६९)--१३ वें गुणस्थान में कितने भाव होते हैं?
उत्तर— तीन है। पारिणामिक, क्षायिक और औदयिक भाव।

प्रश्न (७०)--बारहवें गुणस्थान में कितने भाव होत हैं?
उत्तर—चार है। पारिणामिक भाव, श्रद्धा और चारित्र का क्षायिक भाव, औदयिक भाव और क्षायोपशमिक भाव।

प्रश्न (७१)--ग्यारहवें गुणस्थान मे कितने भाव होते हैं?
उत्तर—(१) यदि क्षायिक सम्यग्द्रष्टि जीव, उपशम श्रेणी मांडता है तो ११ वें गुणस्थान में पाचो भाव होते है।
(२) यदि द्वितीयोपशम सम्यग्द्रष्टि श्रेणी माडता है तो ११ वें गुणस्थान में क्षायिक भाव को छोड़कर चार भाव होते हैं।

प्रश्न (७२)--दशवें गुणस्थान मे कितने भाव होते हं?
उत्तर—(१) क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव है तो उपशम भाव को छोड़कर चार भाव हैं।
(२) यदि द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि जीव है तो क्षायिक भाव को छोड़कर चार भाव हैं।

प्रश्न (७३)--८ वें और ९ वें गुणस्थान में कितने भाव होते हैं?
उत्तर—(१) यदि क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव है तो उपशम भाव को छोड़कर चार भाव हैं।
(२) यदि द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि जीव है तो क्षायिक भाव को

छोड़कर चार भाव हैं।

प्रश्न (७४)—सातवें गुणस्थान मे कितने भाव होते हैं ?

उत्तर—(१) क्षायिक सम्यग्दृष्टि को तो पारिणामिक भाव, क्षायोपशमिक भाव, औदयिकभाव,क्षायिक भाव ये चार भाव होते हैं।
(२) औपशमिक सम्यग्दृष्टि हो तो क्षायिक भाव को छोड़कर चार होते हैं।
(३) क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि हो तो क्षायिक और औपशमिक को छोड़कर तीन होते हैं।

प्रश्न (७५)—छठें, पांचवें, चौथे गुणस्थान में कितने भाव होते हैं ?

उत्तर—(१) क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो तो औपशमिक भाव को छोडकर चार होते हैं।
(२) औपशमिक सम्यग्दृष्टि हो तो क्षायिक भाव को छोडकर चार होते हैं।
(३) क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि हो तो क्षायिक भाव और औपशमिक भाव को छोडकर तीन भाव होते हैं।

प्रश्न (७६) तीसरे गुणस्थान में कितने भाव होते हैं ?

उत्तर—पारिणामिक, औदयिक और क्षायोपशमिक भाव, तीन होते हैं।

प्रश्न (७७)—दूसरे गुणस्थान में कितने भाव होते हैं ?

उत्तर पारिणामिक भाव, औदयिक भाव, क्षायोपशमिक भाव, तथा दर्शन मोहनीय की अपेक्षा से पारिणामिक भाव इस प्रकार चार होते हैं।

प्रश्न (७८)-पहले गुणस्थान में कितने भाव होते हैं ?

उत्तर पारिणामिक भाव, औदयिक भाव,क्षायोपशमिक भाव तीन होते हैं।

प्रश्न (७९)-चौथे से चौदहवें गुणस्थान तक कौन सा भाव हो सकता है ?

उत्तर—क्षायिक भाव हो सकता है।

प्रश्न (८१)-चौथे से ग्यारहवें तक कौनसा भाव हो सकता है ?

उत्तर—औपशमिक भाव हो सकता है।

प्रश्न (८०)-पहले गुणस्थान से १४ वें तक कौन सा भाव होता है ?

उत्तर—औदयिक भाव हो सकता है ।

प्रश्न (८२)-पहले गुणस्थान से लेकर १२वें गुणस्थान तक कौनसा भाव होता है ?

उत्तर—क्षायोपशमिक भाव होता है

प्रश्न (८३)-सिद्ध और सब ससारियो में भी होवे, ऐसा कौन सा भाव है ?

उत्तर—:-पारिणामिकभाव, सिद्ध और ससारी दोनों मे है।

प्रश्न (८४) सिद्धो मे ना होवे, ऐसे कौन कौन से भाव हैं ?

उत्तर—औदयिक, क्षायोपशमिक और औपशमिक भाव सिद्धो मे नही है।

प्रश्न (८५) ससारी में ना होवे, ऐसे कौन कौन से भाव हैं ?

उत्तर—समुच्चय रूप से ससारियो में पांचो हो सकते हैं।

प्रश्न (८६) सब ससारो जीवो मे होवे, वह कौन सा भाव है ?

उत्तर—औदयिक भाव है जो निगोद से लेकर १४ वें गुणस्थान तक है।

प्रश्न (८७)—निगोद से लगाकर सिद्धतक तक के ज्यादा जीवों में होवे, वह कौन सा भाव है ?

उत्तर—औदयिक भाव है।

प्रश्न (८८) -ससार मे सबसे थोड़े जीवो में होवे, वह कौन सा भाव

है ?

उत्तर –औपशमिक भाव है।

प्रश्न (८९)–सम्पूर्ण छदमस्थ जीवों को होवे, वह कौन सा भाव है ?

उत्तर—औदयिक भाव और क्षायोपशमिक भाव है।

प्रश्न (९०)–ज्ञान गुण की पर्याय के साथ कौन से भाव का सम्बंध नही है ?

उत्तर—औपशमिक भाव का सम्बघ नही है।

प्रश्न (९१)–दर्शनगुण की पर्याय के साथ कौन से भाव का सम्बध नही है ?

उत्तर—औपशमिक भाव सम्बन्ध नही है।

प्रश्न (९२)–वीर्यगुण की पर्याय साथ कौन से भाव का सम्बन्ध नही है ?

उत्तर—औपशमिकभाव सम्बन्ध नही है।

प्रश्न (९३)–जब जीव को प्रथम धर्म की शुरुआत होती है, तब कौन कौन से भाव होते हैं ?

उत्तर—औपशमिक, क्षायोपशमिक, औदयिक और पारिणामिक भाव।

प्रश्न (९४)-देवगति में कौन कौन से भाव हो सकते हैं।

उत्तर—देवगति में पाचो भाव सकते हैं।

प्रश्न (९५)—मनुष्य गति में कौन कौन से भाव हो सकते हैं ?

उत्तर—मनुष्यगति मे पाँचों भाव हो सकते हैं।

प्रश्न (९६)–नरकगति में कौन कौन से भाव हो सकते हैं ?

उत्तर—नरक गति में पाँचों भाव हो सकते हैं।

प्रश्न (९७)–तिर्यंचगति में कौन कौन से भाव सकते हैं ?

उत्तर—तिर्यंच गति में पाचों भाव हो सकते हैं।

प्रश्न (९८)–श्रद्धा का क्षायिक भाव, कौन से गुणस्थान में हो

सकता है ?

उत्तर—चौथे से १४वें गुणस्थान तक, तथा सिद्ध में होता है।

प्रश्न (९९)-ज्ञानगुण का क्षायिकभाव कौन से गुणस्थान में होता है?

उत्तर—१३वें गुणस्थान से लेकर सिद्ध तक ज्ञान का क्षायिक भाव होता है।

प्रश्न (१००)--चारित्र का क्षायिक भाव, कौन से गुणस्थान में होता है ?

उत्तर—१२ वे गुणस्थान से लेकर सिद्ध दशा तक होता है।

प्रश्न (१०१)-पाँच भावों में से सबसे कम भाव किस जीव में होने हैं ?

उत्तर—सिद्ध जीवों मे पारिणामिक और क्षायिक भाव ही होते हैं।

प्रश्न (१०२)-एक साथ पाच भाव, किस जीव को, किस गुणस्थान में हो सकते हैं ?

उतर—यदि क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव उपशम श्रेणी मांडे तो ११वें गुणस्थान में पांचों भाव ही सकते हैं।

प्रश्न (१०३)-१५ वा गुणस्थान कौन सा है ?

उतर—१५ वां गुणस्थान नहीं होता है परन्तु १४ वें गुणस्थान से पार सिद्ध दशा है उसे किसी अपेक्षा १५ वां गुणस्थान कह देते हैं, है नही।

प्रश्न (१०४)-औपशमिक सम्यक्त्वी जीव क्षपक श्रेणी मांड सकता है ?

उतर—बिल्कुल नहीं मांड सकता।

प्रश्न (१०५)--क्या क्षायिक सम्यक्त्वी को उपशम श्रेणी हो सकती है

उतर—हां हो सकती है।

प्रश्न (१०६)-क्या क्षपक श्रेणी वाला जीव स्वर्ग में जावे ?

उतर—कभी भी नही, क्योंकि वह नियम से मोक्ष ही जाता है।

प्रश्न (१०७)--औपशमिक सम्यक्त्वी जीव स्वर्ग में जावे ?

उतर—हां जावे।

प्रश्न (१०८)--मनःपर्यय ज्ञान कौन सा भाव है ?

उतर—क्षायोपशमिक भाव है।

प्रश्न (१०९)--केवलज्ञान कौन सा भाव है ?

उतर--क्षायिक भाव है।

प्रश्न (११०)--सम्यग्दर्शन कौन सा भाव है ?

उतर—औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिकभाव तीनो हो सकते हैं, परन्तु एक समय मे एक ही होगा, तीन या दो नही।

प्रश्न (१११)--पूर्ण वीतरागता कौन सा भाव है ?

उतर—औपशमिक और क्षायिक भाव है।

प्रश्न (१११)--वर्तमान समय मे भरत क्षेत्र मे उत्पन्न जीवो को कौन कौन से भाव हो सकते हैं ?

उत्तर—औपशमिक क्षायोपशमिक, औदयिक और पारिणामिक भाव हो सकते है परन्तु क्षायिकभाव नही हो सकता है।

प्रश्न (११३)-आठ कर्मों मे से उदय भाव कितनो में होता है ?

उत्तर—उदय आठो में होता है।

प्रश्न (११४)--आठ कर्मों में से क्षय कितनो में होता है ?

उत्तर—क्षय भी आठों में होता है।

प्रस्न (११५)—आठ कर्मों मे से उपशम कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर—मात्र मोहनीय कर्म में ही होता है।

प्रश्न (११६)--आठ कर्मों में से क्षयोपशम कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर—क्षयोपशम चार घाती कर्मों मे होता है।

प्रश्न (११७)--अनादिअनन्त कौन सा भाव है ?

उत्तर---पारिणामिक भाव हैं।

प्रश्न (११८)--सादीअनन्त कौन सा भाव है ?

उत्तर—क्षायिक भाव है ।

प्रश्न (११६)--अनादिसान्त कौन सा भाव है ?

उत्तर—औदयिकभाव और क्षायोपशमिक भाव है ।

प्रश्न (१२०)- सादिसान्त कौन सा भाव है?

उत्तर—औपशमिक भाव है।

प्रश्न (१२१)--द्रव्यलिंगी मुनि मे कौन कौन से भाव हैं ?

उत्तर—औदयिक, पारिणामिक और क्षायोपशमिक भाव हैं।

प्रश्न (१२२)--धर्मात्मा को कौन कौन से भाव हो सकते है ?

उत्तर—धर्मात्मा को पाँचो हो सकते हैं।

प्रश्न (१२३)--कुन्दकुन्द भगवान को वर्तमान मे कौन २ से भाव हैं?

उत्तर—क्षायोपशमिक औदयिक और पारिणामिक भाव है।

प्रश्न (१२४)--विदेह क्षेत्र के धर्मात्माओ को कौन २ भाव हो सकते हैं ?

उत्तर—पाँचो भाव हो सकते हैं।

प्रश्न (१२५)--पहले गुणस्थान मे होवें, और १३-१४ वें गुणस्थान मे ना होवे ऐसा कौन सा भाव हैं ?

उत्तर—क्षायोपशमिक भाव है।

प्रश्न (१२६)--पहले गुणस्यात में भी होवे, और १३-१४ में भी होवे, परन्तु सिद्ध मे ना होवे, वह कौन सा भाव है?

उत्तर—औदयिक भाव है।

प्रश्न (१२७)--पहले गुणस्थान में भी ना हो और १२-१३-१४ वे गुणस्थान में भी ना हो, ऐसा कौन सा भाव हैं ?

उत्तर—औपशमिक भाव है।

प्रश्न (१२८)--ससार दशा मे बराबर रहने वाला कौन सा भाव है ?

उत्तर—औदयिक भाव है।

प्रश्न (१२९)--प्राप्त होने पर कभी भी अभाव ना होवे ऐसा कौन सा भाव है ?

उत्तर—क्षायिक भाव है।

प्रश्न (१३०)--ज्ञान का क्षायिक भाव कौन सी गति मे हो सकता है?

उत्तर—मात्र मनुष्य गति मे हो सकता है औरो मे नही।

प्रश्न (१३०)--श्रद्धा का क्षायिक भाव कौन सी गति मे हो सकता है?

उत्तर—चारो गतियो मे हो सकता है।

प्रश्न (१३२)- चारित्र का क्षायिक भाव कौन सी गति में हो सकता है ?

उत्तर—मात्र मनुष्य गति मे हो सकता है औरो मे नही।

प्रश्न (१३३)--श्रद्धा का क्षायोपशमिक भाव कौन-कौन सी गति मे हो सकता है ?

उत्तर—चारो गतियो मे हो सकता है।

प्रश्न (१३४)- जो चारित्र नाम पावे ऐसा चारित्र का क्षयोपशम कौन सी गति मे हो सकता है ?

उत्तर—मनुष्य और तिर्यंच मे ही हो सकता है।

प्रश्न (१३५)--ज्ञान का क्षयोपशम भाव ना होवे, तब क्या होवे ?

उत्तर—ज्ञान का क्षायिक भाव अर्थात् केवलज्ञान होवे।

प्रश्न (१३६)--दर्शन का क्षायोपशमिक ना होवे, तब क्या होवे ?

उत्तर—दर्शन का क्षायिक भाव अर्थात् केवलदर्शन होवे।

प्रश्न (१३७)--एक बार नाश होने पर फिर आ सके ऐसा कौन सा भाव है ?

उत्तर—औपशमिक भाव है।

प्रश्न (१३८)--क्षायोपशमिक भाव का नाश होने पर,कौन सा गुणस्थान होता है ?

उत्तर—१३ वां और १४ वां गुणस्थान होता हैं ।

प्रश्न (१३९)--एक बार नाश हो जावे, फिर कभी भी उत्पन्न ना होवे ऐसे भाव का क्या नाम है ?

उत्तर—औदयिकभाव और क्षायोपशमिक भाव हैं।

प्रश्न (१४०)--राग कौन से भाव को बताता है ?

उत्तर—औदयिक भाव को बताता है ।

प्रश्न (१४१)--मतिज्ञान और श्रुतज्ञान कौन सा भाव है ?

उत्तर—क्षायोपशमिक भाव है ।

प्रश्न (१४२)--मोक्ष कौन सा भाव है ?

उत्तर—पूर्ण क्षायिक भाव है ।

प्रश्न (१४३)--ज्ञानावरणी द्रव्य कर्म का सम्पूर्ण नाश होने पर कौन सा भाव प्रगट होता है ?

उत्तर—ज्ञान का क्षायिक भाव अर्थात केवलज्ञान प्रगट होता है ।

प्रश्न (१४४)--औदयिक भाव के साथ सदा ही रहवे, उस भाव का क्या नाम है ?

उत्तर—पारिणामिक भाव है ।

प्रश्न (१४५)--चौथे गुण स्थान से पहले ना होवे, ऐसे कौन २ से भाव है ?

उत्तर—औपशमिक, धर्म का क्षयोपशमभाव और क्षायिक भाव हैं ।

प्रश्न (१४६)--११ वें गुणस्थान के बाद में ना होवें, ऐसा कौन सा भाव है ?

उत्तर—औपशमिक भाव है ।

प्रश्न (१४७)--१२ वें गुणस्थान के बाद में ना होवे, ऐसा कौन सा

भाव है ?

उत्तर- औपशमिक भाव और क्षायोपशमिक भाव हैं।

प्रश्न (१४८)--सब से कम समय रहने वाला, कौन सा भाव है ?

उत्तर—औपशमिक भाव है।

प्रश्न (१४९)-ससार दशा मे बराबर रहे, ऐसा कौनसा भाव है ?

उत्तर—औदयिक भाव है।

प्रश्न (१५०)--साधक भाव के कारण रुप कौन २ से भाव होते हैं ?

उत्तर— औपशमिक भाव, श्रद्धा और चारित्र का क्षायिक भाव और धर्म का क्षयोपशमिक भाव है।

प्रश्न (१५१)--साधन दशा की शुरुआत कौन से भाव से होती है।

उत्तर—औपशमिक भाव से होती है।

प्रश्न (१५२)--साधक दशा की पूर्णतावाला, कौन सा भाव है ?

उत्तर—क्षायिक भाव है।

प्रश्न (१५३)--सीमंधर भगवान को इस समय कौन २ से भाव हैं ?

उत्तर -औदयिकभाव क्षायिकभाव और पारिणामिक भाव हैं।

प्रश्न (१५४)–महावीर भगवान को इस समय कौन २ से भाव हैं ?

उत्तर—क्षायिक भाव और पारिणामिक भाव हैं।

प्रश्न (१५५)--सीमधर भगवान के गणधर को इस समय कौन कौन से भाव हो सकते हैं ?

उत्तर—औदयिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक हो सकते हैं।

प्रश्न (१५६)--क्या भगवान के गणधर को उपशम श्रेणी नही होती?

उत्तर—नही होती है, क्योकि वह उत्कृष्ठ ऋद्धियों का स्वामी है।

प्रश्न (१५७)--पांच भावो में से बध का कारण कौन सा भाव है ?

उत्तर—औदयिक भाव है।

प्रश्न (१५८)--पांच भावों में से मोक्ष का कारण, कौन २ से भाव हैं ?
उत्तर—औपशमिक, क्षायिक और धर्म का क्षयोपशमिक भाव हैं।

प्रश्न (१५९)--बंध मोक्ष से रहित भाव का, क्या नाम है ?
उत्तर—पारिणामिक भाव है।

प्रश्न (१६०)--औदयिकभाव कौन २ से गुणस्थानो मे होता हैं ?
उत्तर—सभी गुणस्थानों में होता है।

प्रश्न (१६१)--औपशमिक भाव के कौन कौन से गुणस्थान हैं ?
उत्तर—४ गुणस्थान से ११वें गुणस्थान तक हैं।

प्रश्न (१६२)--क्षायोपशमिक भाव के कौन कौन से गुणस्थान हैं ?
उत्तर—पहले गुणस्थान से १२ वें गुणस्थान तक हैं।

प्रश्न (१६३)--क्षायिक भाव कौन-कौन से गुणस्थान मे हो सकता है ?
उत्तर— क्षायिकभाव ४ गुणस्थान से १४ वे तक हो सकता है।

प्रश्न (१६४)--औपशमिक भाव वाले कितने जीव होते हैं?
उत्तर—असख्यात् होते है।

प्रश्न (१६५)--ससार मे औपशमिक करता क्षायिक सम्यक्दृष्टि वाले कितने जीव है ?
उत्तर—असंख्यात् गुणा है।

प्रश्न (१६६)--जगत मे औपशमिक करता क्षायिकभाव वाले कितने जीव हैं ?
उत्तर—अनन्त गुणा अधिक है।

प्रश्न (१६७)--वर्तमान में सीमधर भगवान में ना होवे, और हमारे में होवे ऐसा कौनसा भाव है ?
उत्तर क्षायोपशमिक भाव है।

प्रश्न (१६८)--वर्तमान में सीमधर भगवान में होवे और अपने में

अभी ना होवे वह कौनसा भाव है ?

उत्तर क्षायिक भाव है।

प्रश्न (१६९)-सीमंधर भगवान में भी होवे और हमारे में भी होवे, ऐसे कौन २ से भाव हैं ?

उत्तर औदयिक भाव और पारिणामिक भाव हैं।

प्रश्न (१७०)--केवलज्ञान होने पर आत्मा में से कौनसा भाव निकल जाता है ?

उत्तर क्षायोपशमिक भाव निकल जाता है।

प्रश्न (१७१)--एक जीव अरहत से, सिद्ध हुआ तो कौनसा भाव पृथक हुआ ?

उत्तर औदयिक भाव पृथक हुआ।

प्रश्न (१७२)--भाव होने पर भी, बधना हो, क्या ऐसा हो सकता है?

उत्तर (१) क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन होने पर अभी कमी है परन्तु सम्यक्त्वमोहनीय का उदय होने पर भी सम्यक्त्व सम्बन्धी बध नही होता है।

(२) दसवें गुणस्थान में सज्वलन लोभ कषाय होने पर और चारित्रमोहनीय सज्वलन के लोभ का उदय होने पर भी चारित्र सम्बन्धी बध नही होता है।

(३) १२ वें गुणस्थान में ज्ञान, दर्शन, वीर्य का क्षायोपशमिक भाव होने पर भी और ज्ञानावर्णी, दर्शनावर्णी, अन्तराय का क्षयोपशम होने पर भी बध नही होता है।

(४) १३ वें और १४ वें गुणस्थान में असिद्धत्व औदयिक भाव होने पर भी और अघाति कर्मों का उदय होने पर भी बध नहीं होता है।

यहाँ पर भाव होने पर भी, इस इस प्रकार का बध नही

सकता है। (२) चौथे से १०वे गुणस्थान तक क्षयोपशम हो सकता है। (३) चौथे से प्रारम्भ होकर १२वें गुणस्थान तक क्षय होता है (४) पहले से तीसरे गुणस्थान तक उदय रहता है।

प्रश्न (१८५)-जीव के चारित्र गुण के परिणमन में औदयिक,क्षायोपशमिक, औपशमिक और क्षायिकपना किस २ प्रकार है ?

उत्तर—(१) चौथे गुणस्थान में अनन्तानुबधी के अभाव रुप क्षयोपशम हुआ है वह तो क्षायोपशमिक चारित्र है बाकी औदयिकभाव रुप है।(२) पाचवे गुणस्थान में अप्रत्याख्यान के अभावरुप क्षयोपशम है वह तो क्षायोपशमिक रुप देश चारित्र है बाकी औदयिक भाव रुप है (३) छठे गुणस्थान में तीन चौकड़ी के अभावरुप क्षायोपशमिक चारित्र है वह तो सकल चरित्र है बाकी औदयिक भाव रुप है। (४) सातवे गुणस्थान मे सज्वलन का मन्द उदय है वह औदयिक भाव है और जो शुद्धि है वह क्षायोपशमिक चारित्र है। (५) दशवे गुणस्थान मे सज्वलन के लोभ को छोड़ कर वाकी का क्षयोपशम दशा है, वहा क्षायोपशमिक चारित्र है और लोभ का औदयिकभाव है। (६) ११ वे गुणस्थान में औपशमिक चारित्र है और १२वें गुणस्थान मे क्षायिक चारित्र है। चारित्र में क्षायिकपना होने पर सादिअनन्त रहता है।

प्रश्न (१८६)—ज्ञानगुण की पर्याय में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर—(१)ज्ञानगुण की औदयिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक तीन प्रकार की अवस्था नैमित्तिक है और ज्ञानावर्णी कर्म का उदय, क्षय और क्षयोपशम तीन प्रकार की अवस्था निमित्त है। (२) क्षयोपशम पहले से १२वे गुणस्थान तक होता है वह ज्ञान का क्षायोपशमिकभाव है और जितना २ उदयरुप है वह औदयिकभाव है। (३) १३वे से सिद्धदशा तक क्षायिक केवलज्ञान

दशा है।

प्रश्न (१८७)--ज्ञान की आठ पर्यायों में से क्षायोपशमिकदशा कितनों मे हैं ?

उत्तर—ज्ञान की सात पर्यायों में क्षायोपशमिक दशा है।

प्रश्न (१८८)--ज्ञान की आठ पर्यायो में से क्षायिक दशा कितनो में है ?

उत्तर—मात्र एक पर्याय में होती है और वह केवलज्ञान है।

प्रश्न (१८९)--दर्शनगुण की पर्याय में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर— दर्शनगुण की क्षायोपशमिक, औदयिक और क्षायिक तीन दशा नैमित्तिक है और दर्शनावर्णी कर्म की क्षयोपशम, उदय और क्षय तीन दशा निमित्त है।

प्रश्न (१९०) दर्शनगुण की चार पर्यायो में से क्षायोपशमिक और औदयिकपना कितनों मे है ?

उत्तर—दर्शनगुण की तीन पर्यायो मे क्षायोपशमिकपना है और क्षयोपशम के साथ जितना जितना दर्शनावर्णी कर्म का उदय है उतना २ औदयिकपना है।

प्रश्न (१९१)--दर्शनगुण की चार पर्यायो मे से क्षायिक कितनों मे है?

उत्तर—मात्र एक में होता है और वह केवलदर्शन है।

प्रश्न (१९२)—दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य की पर्यायों में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर—दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य यह आत्मा के स्वतन्त्र गुण है इन सब गुणों की क्षायोपशमिक, औदयिक और क्षायिक दशा नैमित्तिक है और अन्तराय कर्म की क्षयोपशम, उदय और क्षय दशा निमित्त है।

प्रश्न (१९३)--दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य में क्षायोपशमिक औदयिक, दशा कहाँ से कहा तक है ?

उत्तर—पहले से १२वें गुणस्थान तक सबकी क्षायोपशमिक दशा है और जितना २ उदय है उतना २ औदयिक भाव है।

प्रश्न (१९४)--दान, लाभ, भोग उपभोग और वीर्य मे क्षायिक दशा कहाँ से कहा तक है ?

उत्तर—१३वे गुणस्थान से सिद्धदशा तक सबकी क्षायिक दशा है।

प्रश्न (१९५)--श्रद्धागुण की पर्याय मे निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर--श्रद्धागुण मे औदयिक, क्षायोपशमिक, औपशमिक और क्षायिक चार प्रकार की दशा नैमित्तिक है और दर्शनमोहनीय की उदय, क्षयोपशम, उपशम और क्षय दशा निमित्त है।

प्रश्न (१९६)--श्रद्धा गुण की चार दशा का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—(१)श्रद्धागुण की पहले से तीसरे गुणस्थान तक मिथ्यात्व रुप औदयिक दशा है। (२) चौथे से सातवें गुणस्थान तक प्रथम औपशमिक अवस्था है। (३) आठवें से ११ वें तक द्वितीयौपशम अवस्था है। (४) चौथे से सातवें गुणस्थान तक क्षायोपशमिक दशा है। (५) चौथे से सिद्धदशा तक क्षायिक दशा है। यह सब नै-निात्तिक दशा है।

प्रश्न (१९७)--दर्शनमोहनोय की चार दशा का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—(१)पहले से तीसरे गुणस्थान तक उदय रुप अवस्था है। (२) चौथे से सातवे गुणस्थान तक प्रथम उपशम दशा हैं। (३) ८ से १२ वे गुणस्थान तक द्वितीयौपशम दशा है। (५) चौथे से सातवें गुणस्थान तक क्षयोपशम दशा है। (५) चौथे से सिद्धदशा तक क्षय रुप दशा है। यह निमित्त है।

प्रश्र (१९८)-- चारित्रगुण की पर्याय में निमित्त-नैमित्तिक क्या है?

उत्तर— चारित्रगुण मे क्षायोपशमिक, औदयिक, औपशमिक और क्षायिक दशा नैमित्तिक है; और चारित्रमोहनीय का क्षयोपशम उदय, उपशम और क्षय दशा निमित्त है।

प्रश्न (१९९)-- चारित्रगुण की पर्याय मे पूर्ण विभाव रुप परिणमन कौनसे गुणस्थान से कहा तक है तथा उसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर—पहले से तीसरे गुणस्थान तक पूर्ण विभावरुप परिणमन है उसे औदयिकभाव कहते है, यह नैमित्तिक है और चारित्र मोह-नीय का उदय निमित्त है।

प्रश्न (२००)--चारित्रगुण के परिणमन में क्षायोपशमिक चारित्र कौन से गुणस्थान से कौन से गुणस्थान तक है ?

उत्तर—चौथे से १०वे गुणस्थान तक क्षायोपशमिक चारित्र है यह नैमित्तिक है, और चारित्र मोहनीय का क्षयोपशम निमित्त है।

प्रश्न (२०१)-- औपशमिक चारित्र में निमित्त-नैमित्तिक क्या है, और कौन से गुणस्थान मे होता है ?

उत्तर—११वें गुणस्थान मे औपशमिकचारित्र प्रगट होता है यह नैमि-त्तिक है और चारित्र मोहनीय कर्म का उपशम निमित्त है।

प्रश्न (२०२) चारित्र गुण मे क्षायिक परिणमन कब से कहाँ तक होता है तथा इसमे निमित्त-नैमित्तिक क्या है।

उत्तर—१२वें गुणस्थान से लेकर सिद्धदशा तक क्षायिक परिणमन है यह नैमित्तिक है और चारित्र मोहनीय कर्म का क्षय निमित्तहै।

प्रश्न (२०३)--चौथे गुणस्थान में तो शास्त्रो में असयमभाव बताया आपने क्षायोपशमिक चारित्र कैसे कह दिया ?

उत्तर--तुम शास्त्रो के कथन का तात्पर्य नही समझते हो इसलिए ऐसा प्रश्न किया है। जैसे— पाँचवें गुणस्थान में देशचारित्र

और छठे गुणस्थान में सकलचारित्र, चारित्र नाम पाता है वैसा चारित्र ना होने की अपेक्षा असयम कहा है । परन्तु चौथे गुणस्थान में अनन्तानुबंधी के अभाव रुप स्वरुपाचरण चारित्र होता है ।

प्रश्न (२०४)--चौथे गुणस्थान मे क्षायोपशमिक चारित्र में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर—स्वरुपाचरण चारित्र नैमित्तिक है और अनन्तानुबधी क्रोधादि का उपशमादिक निमित्त है ।

प्रश्न (२०५)—कर्मों के साथ "सबधवाला" से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—'सबधवाला' यह जीव का भाव है और द्रव्यकर्म यह कार्माण-वर्गणा का कार्य है । दोनो में निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध होने से "सबधवाला" शब्द जोडा है ।

प्रश्न (२०६)--कर्म जीव को दु ख देता है क्या यह बात सत्य है ?

उत्तर—(१) बिल्कुल झूठ है , क्योंकि जड़कर्म स्पर्श रस गध वर्णवाला है । आत्मा स्पर्शादिक से रहित है । दोनो में अत्य-त्याभाव है । (२) कर्म दु ख का कारण नहीं है औदयिक भाव दु ख का कारण है (३) कर्म में ज्ञान नही है जीव मे ज्ञान है । कर्म जड़ ज्ञानवंत को दु खी करे—क्या कभी ऐसा हो सकता है? कभी नही । (४) क्योंकि चन्द्रप्रभु की पूजा में आया है

कर्म बिचारे कौन, भूल मेरी अधिकाई,
अग्नि सहें घन घात, लोहे की सगति पाई ।।

अर्थ कर्म बेचारा कौन ? (किस गिनती मे) भूल तो मेरी ही बडी है । जिस प्रकार अग्नि लोहे की सगति करती है तो उसे घनों के आघात सहना पड़ते हैं ; उसीप्रकार यदि जीव कर्मोदय में युक्त हो तो उसे राग द्वेषादि विकार होते हैं । (५) देव गुरु

शास्त्र की पूजा में भी आया है कि "जड़कर्म घूमाता है मुझको, यह मिथ्या भ्रान्ति रही मेरी"।

प्रश्न (२०७)--क्या जीव को कर्म का उपशम, क्षय, क्षयोपशम और उदय करना पड़ता है?

उत्तर—बिल्कुल नही, क्योकि कर्म की अवस्था कार्माणवर्गणा का कार्य है कर्म एक कार्य हैं उसका कर्ता कार्माणवर्गणा है। जीव तथा दूसरी वर्गणा नही है।

प्रश्न (२०८)- छदमस्थ का क्या अर्थ है?

उत्तर—छद=आवरण। स्थ=स्थिति। अर्थात् आवरणवाली स्थिति हो उसे छदमस्थ कहते है।

प्रश्न (२०९,--छदमस्थ के कितने भेद है?

उत्तर—साधक और बाधक यह दो भेद है।

तीसरे गुणस्थान तक बाधक है और चोथे से १२ वें गुणस्थान तक साधक है।

प्रश्न (२१०)— पांचभावो का कोई दृष्टान्त देकर समझाइये?

उत्तर—(१) जैसे एक काच के गिलास मे पानी और मिट्टी एकमेक दिखती है, उसीप्रकार जिस भाव के साथ कर्म के उदय का सम्बन्ध है वह औदयिक भाव है।

(२)पानी कीचड सहित गिलास में कतकफल डालने से कीचड़ नीचे बैठ गया, निर्मल पानी ऊपर आ गया; उसीप्रकार कर्म के उपशम के साथ वाला भाव, औपशमिकभाव है।

(३)कीचड़ बैठे हुये पानी के गिलास में कंकड़ डाली तो कोई कोई मैल उपर आ गया; उसीप्रकार कर्म के क्षायोपशम के साथवाला भाव क्षायोपशमिक भाव है।

(४)कीचड़ अलग, पानी अलग किया; उसी प्रकार कर्म के क्षय

के सम्बन्ध वाला भाव क्षायिक भाव है।

(५) जिसमें कीचड आदि किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नही है; उसी प्रकार जिसमें कर्म के उदय, क्षय क्षयोपशम और उपशम की कोई भी अपेक्षा नही हैं ऐसा अनादिअनन्त एकरूप भाव वह पारिणामिक भाव है।

प्रश्न (२११)--पारिणामिक भाव को ३२० गाथा जयसेनाचार्य की टीका में किस नाम से कहा है ?

उत्तर—जो सकल निरावरण-अखड-एक-प्रत्यक्ष-प्रतिभास मय-अविनश्वर शुद्ध-पारिणामिक-परमभाव लक्षण-निज परमात्मद्रव्य वही मैं हूं।

प्रश्न (२१२)--मोक्ष के कारण किसे कहा है ?

उत्तर—शुद्ध पारिणामिकभाव का अवलम्बन लेने से जो शुद्धदशा रुप औपशमिक क्षायोपशमिक और क्षायिक भाव हैं वह व्यवहार रत्नत्रयादि से रहित हैं वह शुद्ध उपादानकारण भूत (क्षणिक उपादान) होने से मोक्ष के कारण है। यह प्रगटरुप मोक्ष की बात हैं।

प्रश्न (२१३)--शुद्ध पारिणामिकभाव क्या है ?

उत्तर—ध्येयरुप है, ध्यान रुप नही है।

प्रश्न (२१४)--शुद्ध पारिणामिकभाव ध्यान रुप क्यों नही है ?

उत्तर—ध्यान विनश्वर है और शुद्ध पारिणमिकभाव तो अविनाशी है।

प्रश्न (२१५) ज्ञानी स्वय ध्यान रुप परिणामित है तो वह किसका ध्यान करता है ?

उत्तर— एक मात्र त्रिकाली परम पारिणामिक भाव निज परमात्म द्रव्य वही मैं हूं।

प्रश्न (२१६)--ज्ञानी की दृष्टि किस भाव पर होती है ?
उत्तर- ज्ञानी की दृष्टि शुद्ध पर्याय पर भी नही होती, तब विकार और पर द्रव्यो की तो बात ही नही है; मात्र अपने एक अखड स्वभाव पर होती है।

प्रश्न (२१७)--ससार के कार्यों में प्रवर्तते हुए हम ज्ञानी को देखते हैं?
उत्तर- जैसे लडकी की शादी होने पर मा बाप के घर आने पर भी घर का सारा काम काज करते हुए भी दृष्टि अपने पति पर ही होती है ; उसीप्रकार ज्ञानियो की दृष्टि चाहे वह ससार के कार्यों में दीखे-और कही युद्ध में दीखे उनको दृष्टि एकमात्र अपने स्वभाव पर ही होती है।

प्रश्न (२१८ --हमारा कल्याण कैसे हो ?
उत्तर--जो अनादिअनन्त त्रिकाली स्वभाव है उसकी दृष्टिकरे तो धर्म की शुरुआत होकर, क्रम से वृद्धि होकर सिद्ध परमात्मा बन जावेगा।

प्रश्न (२१९)--शुद्धोपयोग किसे कहा है ?
उत्तर—"शुद्धात्माभिमुख परिणाम" को शुद्धोपयोग कहा है।

प्रश्न (२२०)--आगमभाषा में शुद्धोपयोग किसे कहा जाता है ?
उत्तर—औपशमिकभाव, धर्म का क्षायोपशमिकभाव और क्षायिक भाव इन इन भावो को शुद्धोपयोग कहा है।

जिन, जिनवर और जिनवर वृषभों के द्वारा पांच असाधारण भावों का वर्णन पूरा हुआ।

मोक्षमार्ग सम्बन्धी कुछ प्रश्नोत्तर

प्रश्न (१)--क्या निश्चय के बिना व्यवहार कहीं कहा जा सकता ?

उत्तर—बिल्कुल नही कहा जा सकता है। जैसे एक आदमी चालीस रुपये के एक सेर बादाम लाया और फोड़कर गिरी निकाल ली और बाकी छिलका आधा सेर रहा। वह दुकानदार के पास जावे और कहे भाई आधा सेर छिलके बीस रुपया दे दो, क्या वह देगा ? नही देगा, बल्कि गाली सुनायेगा, क्योंकि बादाम की गिरी होने के कारण छिलके की कीमत कही जाती है, छिलके की कीमत वास्तव में भी कुछ नही है; उसी प्रकार निश्चय हो तो व्यवहार कहा जाता है।

(२) जैसे एक बाई ओखली मे चावल कूट रही थी दूसरी ने पूछा बहिन क्या कर रही है; चावल निकाल रही हूं, तो वह दूसरी बाई सड़क पर चावल का छिलका पड़ा था लाकर ओखली में कूटने लगी, तो क्या कभी चावल निकलेगा ? कभी भी नही; उसी प्रकार बाहरी क्रियाओं और शुभभावों से तीनकाल तीन लोक में धर्म की प्राप्ति नही होगी। निश्चय हो तो व्यवहार कहा जाता है। इसलिए निश्चय के बिना व्यवहार नाम नही पाता है।

प्रश्न (२)--अपराध क्या है, और राध क्या है ?

उत्तर—(१) नौ प्रकार के पक्षो में अपनेपने की बुद्धि वह अपराध है। (२) अपनी आत्मा में लीन रहना वह राध है, प्रसन्नता है।

प्रश्न (३)-ज्ञानी को बंध नहीं होता है और अज्ञानी को बंध होता है ऐसा क्यों है ?

उत्तर—जैसे किसी की आँख पर पट्टी बंधी हुई है (१) वह पट्टी को नही देख सकता है (२) शरीर को नही देख सकता है (३) पर पदार्थों को नही देख सकता है। और जरा पट्टी को दूर करदो तो (१) वह पट्टी को देख सकता है (२) शरीर को देख सकता है (३) पर पदार्थों को भी देख सकता है, उसीप्रकार अज्ञानी ने मोह-राग-द्वेष की पट्टी बांध रक्खी है उस पट्टी के नशे में वह (१) स्व को नहीं जानता है (२) पर को नहीं जानता है। (३) विकार दु:ख रूप है ऐसा नहीं जानता है इसलिए अज्ञानी को बंध होता है। और ज्ञानी ने मोह राग द्वेष की पट्टी को दूर करके सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति कर ली है (१) वह स्व को स्व जानता है (२) पर को पर जानता है, (३) विकार पृथक है ऐसा जानता है इसलिए ज्ञानी को बंध नही होता है।

प्रश्न (४)--जो जीव पर का दोष देखता है विकार से भला होना मानता है, पर पदार्थों से मुझे लाभ नुकसान है ऐसे जीवों के लिए आचार्यों ने ' अनीति" 'हरामजादीपना' 'नपुंसक', 'व्यभिचारी', 'पापी', 'मिथ्यादृष्टि' आदि शब्दो से क्यों सम्बोधन किया है ?

उत्तर--जैसे किसी ने अपने ऊपर मोटे मोटे तीन गद्दे गेर रक्खे हैं उस पर कोई लाठी बरसावे तो भी वह जानता नहीं है; उसीप्रकार अज्ञानी ने अनादिकाल से मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चारित्र रूपी तीन गद्दे ओढ रक्खे हैं उसके भला होने के लिए ऐसे शब्दो से सम्बोधन किया है उनके यह शब्द करुणासूचक है ।

प्रश्न (५)--अशुभकर्म बुरा, शुभकर्म अच्छा यह मान्यता कैसी है ?

उत्तर—यह मान्यता अनन्त ससार का कारण है (१) क्योकि "जैसे अशुभ कर्म जीव को दु.ख करता है। उसीप्रकार शुभकर्म भी जीव को दु ख करता है। कर्म मे तो भला कोई नही है। अपने मोह को लिये हुए मिथ्यादृष्टि जीव कर्म को भला करके मानता है'
(समयसार कलश टीका कलश न० १००)

(२) "शुभ अशुभ बघ के फल मझार, रति अरति करै निजपद विसार" छ ढाला मे भी लिखा है। जिसको अपना पता नही ऐसा मिथ्यादृष्टि शुभ अच्छा, अशुभ बुरा मानता है।

(३) जो शुभ अशुभ मे अन्तर मानता है वह जीव घोर अपार ससार मे भ्रमण करता है।
[प्रवचनसार गा० ७७]

(४) पुरुषार्थसिद्धिउपाय गा० १४ में ऐसी मान्यता को ससार का बीज कहा है।

प्रश्न (६)-शुभोपयोग भला, उससे (शुभोपयोग से) क्रम से कर्म की निर्जरा होकर मोक्ष की प्राप्ति होती है यह मान्यता कैसी है ?

उत्तर—यह मान्यता श्वेताम्बरो की है और जो दिगम्बर धर्मी कहलाने पर शुभोपयोग से सवर, निर्जरा और म.क्ष मानते हैं वह दिगम्बर धर्म की आड मे श्वेताम्बर मत की पुष्टि करने वाले निगोद के पात्र हैं।

(१) "कोई जीव शुभोपयोगी होता हुआ यति क्रिया मे मग्न होता हुआ शुध्दोपयोग को नही जानता, केवल यति क्रिया मात्र मग्न है। वह जीव ऐसा मानता है कि मैं तो मुनीश्वर, हमको विषय-कषाय सामग्री निषिध्द है,। ऐसा जानकर विषय कषाय समाग्री को छांडता, है आपको धन्यपना मानता है, मोक्षमार्ग मानता है सो ऐसा विचार करने पर ऐसा जीव मिथ्यादृष्टि

है। कर्मबंध को करता है, कोई भलापन तो नहीं है।

[समयसार कलश टीका कलश नं० १०१]

(२) शुभभाव से संवर निर्जरा मानने वाले को समयसार गा० १५४ में 'नपुंसक' कहा है। गा० १५६ में अज्ञानी लोग व्रत तपादि को मोक्ष हेतु मानते हैं उसका निषेध किया है।

प्रश्न (७)--शुभ अशुभ क्रिया आदि बंध का ही कारण हैं मोक्ष का कारण नही हैं ऐसा राजमल्ल जी ने कहीं कुछ कहा है?

उत्तर—(१) "जो शुभ अशुभ क्रिया, सूक्ष्म-स्थूल अन्तर्जल्प बहिर्जल्प रुप जितना विकल्परुप आचरण हैं वह सर्व कर्म का उदयरुप परिणमन है जीव का शुद्ध परिणमन नहीं है इसलिए समस्त ही आचरण मोक्ष का कारण नहीं है, बंध का कारण है"।

(२) "यहाँ कोई जानेगा कि शुभ-अशुभ क्रिया रुप जो आचरण रुप चारित्र है सो करने योग्य नहीं है, उसीप्रकार वर्जन करने योग्य भी नहीं है? उत्तर दिया है वर्जन करने योग्य है। कारण कि व्यवहार चारित्र होता हुआ दुष्ट है, अनिष्ट हैं, घातक हैं, इसलिए विषय-कषाय के समान क्रिया रूप चारित्र निषिद्ध है"

[कलश टीका कलश नं० १०७ तथा १०८]

प्रश्न (८)--श्री राजमल जी ने कलश टीका कलश नं० १०२ में लिखा है कि "शुभ कर्म के उदय में उत्तम पर्याय होती है। वहाँ धर्म की सामग्री मिलती है, उस धर्म की सामग्री से जीव मोक्ष जाता है इसलिए मोक्ष की परिपाटी शुभ कर्म है" वह क्यों लिखा?

उत्तर—अरे भाई तुमने प्रश्न को भी अच्छी तरह नही पढा ऐसा लगता हैं, क्योंकि इस प्रश्न का पूरे करने से पहले लिखा है "ऐसा कोई मिथ्यावादी मानता है और उसको उत्तर दिया है "कोई कर्म शुभ रुप, कोई कर्म अशुभ रुप ऐसा, भेद तो नहीं है ………— ऐसा अर्थ निश्चित हुआ।

प्रश्न (९)--क्या मोक्षार्थी को जरा भी राग नही करना चाहिए ?
उत्तर—(१) "मोक्षार्थी को सर्वत्र किंचित भी राग नही करना चाहिए" ऐसा करने से "वह भव्य जीव वीतराग होकर भव सागर से तरता है।" [पंचास्तिकाय गा० १७२]
(२) राग कैसा भी हो, वह अनर्थ सन्तति का क्लेश रूप विलास ही है ; [पचास्तिकाय गा० १६८]
(३) ज्ञान का अस्थिरता सम्बन्धी राग भी मोक्ष का घातक, दुष्ट अनिष्ट है और बंध का कारण है ।
(४) मिथ्यादृष्टि अणुव्रत महाव्रतादि को उपादेय मानता है इसलिए उसका शुभभाव अनर्थ परम्परा निगोद का कारण है,
(५) ज्ञानी का राग पुण्य बंध का कारण है और मिथ्यादृष्टि का शुभराग पाप बंध का कारण है ।
[परमात्म प्रकाश अध्याय प्रथम गा० ६८]
प्रश्न (१०)--व्यवहार बढ़े, तो निश्चय बढे क्या यह कहना ठीक है ?
उत्तर—बिल्कुल गलत है क्योंकि :—
(१) द्रव्यलिंगी को व्यवहाराभास जिनागम अनुसार है, उसे निश्चय होता ही नही है ;
(२) ८, ९, १० गुणस्थानो में निश्चय है,वहां पर देवगुरु शास्त्र का राग, अणुव्रत, महाव्रतादि का राग नही है ;
(३) केवली भगवान को निश्चय है और व्यवहार है ही नही। इसलिए व्यवहार हो, तो निश्चय बढे यह अन्य मिथ्यादृष्टियों की मान्यतायें है जिन, जिनवर जिनवरवृषभो की नही है ।
प्रश्न (१०)--जो जीव जैन धर्म का सेवन आजीविकादि के लिए करते हैं उन्हें भगवान ने क्या कहा है ?
उत्तर—(१)जैनधर्म का सेवन तो ससार नाश के लिए किया जाता हैं, जो उसके द्वारा सासारिक प्रयोजन साधना चाहते हैं वह बड़ा

अन्याय करते हैं; इसलिए वे तो मिथ्यादृष्टि हैं ही।

(२) सांसारिक प्रयोजन सहित जो धर्म साधते हैं, वे पापी भी है, मिथ्यादृष्टि तो हैं ही।

(३) जो जीव प्रथम से ही सासारिक प्रयोजन सहित भक्ति करता है उसके पाप का ही अभिप्राय हुआ।

[मो० प्र० पृष्ट २१६ से २२२]

(४) इस प्रयोजन हेतु अरहन्तादिक को भक्ति करने से भी तीव्र कषाय होने के कारण पापबध ही होता है। [मो० प्र० पृष्ट ८]

(५) शास्त्र बाचकर, पूजा करके, आजीविका आदि लौकिक कार्यसाधना अनन्त ससार का कारण है।

प्रश्न (११)–क्या बाह्य सामग्री से सुख दुःख होता है ?

उत्तर—बिल्कुल नही, क्योंकि आकुलता का घटना-बढना रागादिक कषाय घटने-बढने के अनुसार है इसलिए बाह्य सामग्री से सुख दुःख, मानना, मात्र भ्रम ही है।

प्रश्न (१२)–क्रोधादिक क्यों उत्पन्न होते है ?

उत्तर—पदार्थ अनिष्ट इष्ट भासित होने से अज्ञानियों को क्रोधादिक उत्पन्न होते है।

प्रश्न (१३)--क्रोधादिक के अभाव के लिए क्या करें ?

उत्तर—जब तत्वज्ञान के अभ्यास से कोई पदार्थ इष्ट अनिष्ट भासित ना हो, तब स्वयमेव ही क्रोधादि उत्पन्न नही होते तब सच्चे धर्म की प्राप्ति होती है।

प्रश्न (१४)– क्या शुभभाव परम्परा मोक्ष का कारण है ?

उत्तर—बिल्कुल नही, क्योंकि शुभभाव किसी का भी हो वह बध का ही कारण है।

(अ) जैसे-सातवें गुणस्थान की दशा साक्षात् मोक्ष का कारण तो इसकी अपेक्षा छठे गुणस्थान में जो तीन चौकड़ी के अभाव

रुप शुद्ध परिणति है वह परम्परा मोक्ष का कारण है।

(आ) शुद्ध परिणति अकेली नही होती उसके साथ भूमिकानुसार शुभभाव भी होता है उसमे शुद्ध परिणति सम्वर निर्जरा रुप है और राग बंध रुप है। ज्ञानी उस शुभभाव को हेय रुप श्रद्धा करता है और नियम से उसका अभाव करके शुद्ध दशा में आ जाता है, इसलिए शास्त्रो मे कही कही ज्ञानी के शुभभावो के अभाव को परम्परा मोक्ष का कारण कहा है। कहने के लिए मोक्ष का कारण है वास्तव मे बधरुप ही है।

प्रश्न (१५)—ज्ञानियो को बीच मे व्यवहार क्यो आता है?

उत्तर—(अ) जैसे देहली जाते हुए रास्ते मे और स्टेशन पडते है वह छोडने के लिए है। (आ) बादाम मे जो छिलका है और गन्ने मे जो छिलका है वह फेंकने के लिए है; उसीप्रकार ज्ञानियो को जो व्यवहार बीच मे आता है वह फेंकने के लिए है क्योकि ज्ञानी उसे हलाहल जहर, मोक्ष का घातक मानते हैं इसलिए सम्पूर्ण व्यवहार अभूतार्थ है।

—०:—

चिन्मूरत दृगधारी की......

चिन्मूरत दृगधारी की मोहि, रीति लगति है अटापटी ।।
बाहिर नारकि-कृत दुख भोगे, अन्तर सुखरस गटागटी।
रमति अनेक सुरनि संग पै तिस परिणतितें नित हटाहटी ।।
ज्ञान विराग शक्तितें विधिफल भोगत पै विधि घटाघटी।
सदन निवासी तदपि उदासी, तातें आस्रव छटाछटी ।।
जे भवहेतु अबुधके ते तस करत बन्ध की झटाझटी।
नारक पशु त्रिय षड विकलत्रय, प्रकृतिनकी ह्वै कटाकटी ।।
सयम धरि न सकै पै संयम धारन की उर चटाचटी।
तासु सुयश गुन की 'दौलत' के लगी रहै नित रटारटी ।।